चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Photo by P. K. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

मुस्कुराहट क्यों ?

प्रेषक
भोगीलाल मोदी, सिरोही.

हम आश्वासन देते हैं कि
विविध रंगों के फोटो आफसेट
प्रिंटिंग् और प्रोसेस ब्लॉक मेकिंग्
में एक ऊँचा स्तर निभायेंगे।

★

हम अपने चतुर टेक्नीशियन, कलाकार, आधुनिक मेशिनरी और एक ऐसा बड़ा केमरा, जो ३०" × ४०" का है, और हिन्दुस्तान के किसी भी छपाईखाने में मौजूद नहीं है—इन सारी उपयोगी शक्तियों के साथ आपकी सेवा के लिये प्रस्तुत हैं।

★

मूल से टक्कर लेनेवाले रीप्रोडक्शन
के लिए हम हामी हैं।

प्र सा द प्रो से स

चन्दामामा बिल्डिङ्स, :: मद्रास - २६

चन्दन और नन्दिनी

चन्दन और नन्दिनी दोनों भाई बहिन थे। एक बार वे माता पिता के साथ अपने बगीचे में घूमने गये। वे बहुत खुश थे। उन्होंने बगीचे में इधर उधर टहलते समय दीवार के पास एक नीम के पेड़ पर निम्बोली देखी। नन्दिनी ने कहा-"कैसे सुन्दर हैं ये फल! ये जरूर मीठे होंगे। क्या ये मीठे नहीं होंगे भैय्या?" चन्दन ने कहा-"आओ, चखकर देखें।"

जब उन्होंने निम्बोली मुख में डाली तो वे थूकने लगे। "कितनी कड़वी! कितनी गन्दी!" गुस्से में चिल्लाते हुये वे अपने पिताजी के पास गये और कहा-"यह पेड़ बहुत गन्दा है, पिताजी उसे कटवा दीजिये।" उनके गुस्से का कारण सुनकर पिता ने कहा-"तुम्हें मालूम नहीं, यह बहुत उपकारी पेड़ है। इसके फल खाये नहीं जाते, इसका रस कई औषधियाँ बनाने के काम में आता है। जैसे, "**नीम टूथ पेस्ट**" जिससे तुम दाँत साफ करते हो। इसमें नीम के कीटाणु नाशक रस के अतिरिक्त और भी कई लाभप्रद गुण हैं। नीम टूथ पेस्ट के उपयोग से तुम्हारे दाँत कितने सफेद हैं, अब दाँतों में कोई तकलीफ भी नहीं है। कलकत्ता केमिकल के "**मार्गो सोप**" के बारे में सोचो। इससे रोज शरीर धोने से तुम्हारा शरीर कितना साफ और नीरोग है। देखो "**नीम टूथ पेस्ट**" और "**मार्गो सोप**" कैसे उपकारी हैं। अब भी क्या पेड़ कटवाने के लिये कहोगे?"

"नहीं पिताजी!" चन्दन और नन्दिनी ने कहा-"हमें नहीं मालूम था कि नीम का पेड़ इतना उपयोगी है। हम नीम और नीम से बनाये हुये "**नीम टूथ पेस्ट**" और "**मार्गो सोप**" की बातें आज ही अपने दोस्तों को कहेंगे।"

(बच्चों के लिये, कलकत्ता केमिकल द्वारा प्रचारित)

चन्दामामा के लिए निम्नलिखित स्थानों में एजेण्ट चाहिए :

अमरोहा, बहराइच, बलिया, दरभांगा

जो जमानत रखने के लिये तैयार हों, वे पत्र-व्यवहार कर सकते हैं।

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, मद्रास - २६

छः रुपये में अंग्रेजी मैट्रिक पास

इस किताब को प्रति दिन एक घंटा पढ़ने से आप तीन महिने में ए. बी. सी. डी. से लेकर आवश्यक ग्रामर, ट्रांसलेशन, लेटर राइटिंग, ऐसे राइटिंग मुहावरों का इस्तेमाल सीख कर अंग्रेजी में धड़ाके की बातचीत करना सीख कर अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा पास कर सकते हैं। ४५० पृष्ठ की सजिल्द-मूल्य छः रु० ले. वीरेन्द्र त्रिपाठी, एम. ए.

पाक चयनिका (१००० तरह की खाने की चीजें बनाना सीखिये) ६) बिगड़े रेडियो ठीक करना सीखिये ५) पन्द्रह रुपये में रेडियो सेट बनावें १॥) फिल्म हारमोनियम गाइड २)

किताबें वी. पी. द्वारा मँगाने का पता :
रंगभूमि बुक डिपो, दरीबा (३) दिल्ली ६

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल
अनुपम गन्ध
एवं केश शोभा
केलिये
वीर-बच्चा
बच्चों की ताकत के लिये
अनुपम टानिक
VEER BACHWA
बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता-२०

चन्दामामा

विषय - सूची

संपादकीय	....	५
व्यापारी - दर्ज़ी	पद्य-कथा	६
मुख - चित्र	....	८
भाग्य का खेल	कहानी	९
अक्ल के दुश्मन	"	१३
जब भाग्य जगे तो....	"	१७
धूमकेतु	धारावाहिक	२१
इशारोंवाला पण्डित	कहानी	२९
सूक्ष्मदृष्टि	"	३३
तीन पण्डित	"	३६
पाँच रोटियाँ	कहानी	३८
सास - बहू की कहानी	"	४१
विचित्र शीशा	"	४५
पाटलीपुत्र	"	४९
चन्दामामा	....	५२
चन्दामामा में खरगोश	कहानी	५३
रंगीन चित्र - कथा	"	५६
फोटो-परिचयोक्ति	....	५७
समाचार वगैरह	....	५९
चित्र - कथा	....	६०

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना

*

१. ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न हो उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकता।

२. पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते के साथ सूचना देनी चाहिए।

३. प्रति नहीं पाई तो १०-वी के पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद को आने वाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

—व्यवस्थापक, 'चन्दामामा'

संपादक: चक्रपाणी

किसी भी देश का भविष्य तभी उज्वल है, जब कि उस देश के बच्चों का वर्तमान उज्वल हो। बच्चे भी अपनी जिम्मेवारी समझें।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सर्वतोमुखी निर्माण में रत है। कई योजनाओं को कार्यान्वित किया जा रहा है, जिनका लाभ आगामी सन्तति को पूरी तरह मिल सकेगा। शिक्षा के क्षेत्र में भी शनैः शनैः क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं।

देश-निर्माण के कार्य में बच्चों की भी विशिष्ट जिम्मेवारियाँ हैं। यह उनके लिये आवश्यक है कि वे अध्यवसायी और अध्ययनशील बनकर, भारत के उज्वल भविष्य के योग्य बनें।

वर्ष: 6 जनवरी 1955 अङ्क: 5

SANKAR

व्यापारी - दर्ज़ी

दर्ज़ी एक शहर में सुख से,
बिता रहा जीवन था ऐसे —
प्रतिक्षण विजयादशमी उसकी
या हो रोज दिवाली जैसे !

चला चला सिंगर मशीन वह,
गाता रहता था संगीत;
'ई-ई सी-सी' करता निशि-दिन
किया काम करता तल्लीन।

व्यापारी था इक पड़ोस में,
धन का लगा रखा अंबार;

जगता सारी रात वह,
दिन-भर करता था व्यापार !

अगर चाहता कभी ज़रा वह,
आँख मूँदकर लूँ आराम;
दर्ज़ी का संगीत उसी क्षण,
कर देता सब नींद हराम !

'अन्न-वस्त्र की भाँति निंदिया,
लूँ खरीद निज मर्ज़ी से;
धन तो मेरे पास !' सोच यह,
बुला कहा उसने दर्ज़ी से—

'तुम गरीब हो और धनी मैं
ज्ञात मुझे तुम रहते जैसे,

धर्म यही है मेरा, जानूँ—
पड़ोस में सब रहते कैसे!

सुखमय जीवन सदा बिताओ,
रुपये लो ये दो हज़ार...!'
पा इतना धन दर्जी भी तब,
बैठ गया तज कारोबार।

घर में आकर उसने जल्दी,
धन को नीचे गाड़ दिया तब;
लेकिन धन के कारण उसको,
रोगों ने आ घेर लिया सब।

लगने लगा यही दर्जी को,
जग सारा ही है यह चोर;

* * *

भूला वह संगीत, वणिक की,
चिंता भी अब रही न घोर।

लेकिन कुछ ही समय बाद जब,
दर्जी ने जाना निज ह्रास;
सब धन अब वह उठा शीघ्र ही,
पहुँचा व्यापारी के पास!

और साफ़-साफ़ कहा उसी क्षण,
'ले, ले, अपना धन यह सारा;
किंतु शीघ्र ही कर दे वापस,
सुख भी औ' संगीत हमारा!!"

मुख-चित्र

अर्जुन तीर्थयात्रा करता करता, अनेक देशों का पर्यटन कर, द्वारका के समीप पहुँचा। जब यह खबर श्री कृष्ण को मिली, वह उसकी आगवानी करने निकल पड़ा।

श्री कृष्ण की सुभद्रा नाम की एक बहिन थी। कृष्ण को मालूम था कि उसके लिये योग्य वर कृष्ण था। परन्तु उसके बड़े भाई बलराम को यह सम्बन्ध पसन्द न था। इसलिये कृष्ण ने एक चाल चली।

अर्जुन सन्यासी वेष में "रैवतकाद्रि" में रहने लगा। उसकी कीर्ति आसपास के प्रान्तों में फैलने लगी। बलराम को भी इसका पता लगा। बलराम को साधु-भक्तों के प्रति अमित भक्ति थी। इसलिये वह सपरिवार उससे मिलने गया। उसका आदर-सत्कार किया और अपने बगीचे में उनके रहने का प्रबन्ध कर दिया।

तब उस सन्यासी ने "चातुर्मास व्रत" करना शुरू किया। उसकी सेवा शुश्रूषा के लिये बलराम ने सुभद्रा को नियुक्त किया। "सन्यासियों का विश्वास न करो, सुभद्रा को यह काम मत सौंपो"—श्री कृष्ण ने भाई से कहा। परन्तु साधु-भक्त बलराम ने उसकी बात न सुनी।

सेवा शुश्रूषा करते करते, सुभद्रा और सन्यासी में अच्छा परिचय हो गया। दिन प्रति दिन उनकी घनिष्टता बढ़ती गई। उसके सामने सुभद्रा अर्जुन की कई तरह प्रशंसा करने लगी। तब सन्यासी वेष धरे अर्जुन ने भेद खोल दिया और कहा कि वही अर्जुन है। सुभद्रा बहुत आनन्दित हुई।

जब सुभद्रा ने अपने मन की बात कृष्ण से कही तो उसने उन दोनों का चुपके-चुपके विवाह करने का प्रबन्ध किया। उन दोनों को एक रथ पर बैठा, वह इन्द्रप्रस्थ की ओर चला। यह जान बलराम को बहुत गुस्सा आया। उसने अर्जुन को ललकारा। दोनों में घमासान युद्ध हुआ। उस समय कृष्ण ने आकर बीच-बचाव किया। सुभद्रा से अर्जुन का धूम-धाम से विवाह हुआ।

सुभद्रा का लड़का वीर अभिमन्यु था।

भाग्य का खेल

एक ज़माना था, जब बुन्देलखण्ड में ठाकुर वंश के राजा राज्य करते थे। परन्तु उस वंश से सम्बन्धित रूपसिंह बहुत ही गरीब था। धन और सम्पत्ति तो अलग, इस संसार में उसका कोई खास बन्धु भी न था। उसकी सम्पत्ति कुल मिलाकर थी— फटे पुराने चीथडे, दो टाट, और एक कुल्हाड़ी।

उस कुल्हाड़ी से रूपसिंह सवेरे से दो पहर तक जङ्गल में लकड़ी काटता और शाम को तीन रुपये में उन्हें बेच देता था। उसमें से दो रुपये धोबियों को देकर वह राजा-महाराजाओं की पोशाक क़िराये पर लेता, और एक रुपये से वह एक घोड़ा किराये पर लेता। उस पोशाक को पहिन, घोड़े पर चढ़ खूब तेज़ी से, शहर की बड़ी बड़ी सड़कों पर शान से मटरगश्ती करता। हट्टे-कट्टे, खूबसूरत नौजवान को देखकर लोग सोचा करते कि वह कोई राजा है। इस प्रकार रोज रूपसिंह ठाकुर वंश की मान-मर्यादा को बनाये रखता। अन्धेरा होते ही पोशाक और घोड़ा वापिस दे, अपने मामूली कपड़े पहिन, थोड़े से चने वगैरह खा, पानी पीकर पेट भर लेता। फिर एक टाट बिछाकर और एक ओढ़ कर सो जाता।

जब एक बार रूपसिंह जङ्गल में लकड़ियाँ काट रहा था, तब उसको पास से कोई सुगन्धि आई। पास जाकर देखा, तो वहाँ एक चन्दन का पेड़ था। रूपसिंह ने कुल्हाड़ी से एक हाथ चन्दन का टुकड़ा काटा, और रोज़ की तरह लकड़ियाँ काट कर सांझ होते होते शहर वापिस आ गया। शाम को जब रूपसिंह राजा की पोशाक

एस. पी. श्रीवास्तव

पहिनकर घोड़े पर चढ़, हवा से बातें कर रहा था, शहर की गली में उसके सामने एक परदेशी व्यापारी आया। 'नमस्ते, महाप्रभू!' उसने सविनय कहा।

'तू कौन है!'—रूपसिंह ने बड़े रोब से पूछा।

'प्रभू! मैं व्यापार करता रहता हूँ। आपके देश में व्यापार पूरा कर लङ्का जा रहा हूँ'—परदेशी व्यापारी ने सविनय निवेदन किया।

रूपसिंह ने थोड़ी देर तक कुछ सोचा, फिर जेब में से चन्दन का टुकड़ा निकाल परदेशी को देते हुये कहा—'इसे ठाकुर रूपसिंह की तरफ़ से लङ्का के राजा को तोहफ़े के रूप में देना। तुम्हारा काम बन जायगा।' उसने घोड़े को ऐंड़ लगाई, और तेज़ी से चला गया।

व्यापारी ने रूपसिंह के उपहार को लङ्का के राजा के पास पहुँचा दिया। चन्दन का टुकड़ा कभी लङ्का के राजा ने नहीं देखा था। वह उसको देखकर बड़ा चकित और आनन्दित हुआ। उसने न केवल व्यापारी की आवभगत ही की, बल्कि उसके व्यापार के लिये हर इन्तज़ाम कर दिया। जब व्यापारी लङ्का छोड़कर जाने लगा तो राजा ने रूपसिंह के लिये जवाहरातों से जड़ी खड़ाऊँओं का जोड़ा भेजा।

वह व्यापारी वापिस आकर नगर में जब रूपसिंह की प्रतिक्षा कर रहा था, तो रूपसिंह घोड़े पर उस तरफ़ से निकला।

'नमस्ते महाप्रभू!' व्यापारी ने कहा।

'तू कौन है!' रूपसिंह ने घोड़ा टोक कर शान से पूछा।

'महाप्रभू! मैं एक परदेशी व्यापारी हूँ। आपका भेजा हुआ उपहार मैंने लङ्का के राजा को दे दिया था। उन्होंने आपके

लिये ये खड़ाऊँ भेजी हैं!'—व्यापारी ने कहा।

'तू अब किस देश को जा रहा है?'—रूपसिंह ने पूछा।

"अरब देश को जा रहा हूँ।"—परदेशी व्यापारी ने बताया।

"तो अरब देश के बादशाह को हमारी तरफ़ से यह खड़ाऊँ उपहार में देना। तुम्हारा काम बन जायगा।" यह कह रूपसिंह घोड़े पर चला गया।

व्यापारी ने रूपसिंह के कथनानुसार काम किया। जब अरब देश के बादशाह ने कीमती खड़ाऊँ देखी तो उसने सोचा कि वैसा उपहार कोई बहुत धनी और शक्तिशाली राजा ही भेज सकता है। अरब देश के घोड़े बहुत प्रसिद्ध हैं और अच्छे होते हैं। अच्छे घोड़ों में से बादशाह ने सौ घोड़े छाँटकर व्यापारी को दे दिये।

"रूपसिंह ठाकुर से हमारा सलाम कहना, और ये सौ घोड़ों का तोहफ़ा उनको हमारी तरफ़ से पहुँचा देना"।—बादशाह ने व्यापारी से कहा।

व्यापारी उन सौ घोड़ों को साथ ले आया। और पहिले की तरह रूपसिंह की प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी देर बाद रूपसिंह घोड़े पर चढ़ तेज़ी से आया और व्यापारी को देखकर रुका।

व्यापारी ने सौ घोड़ों को दिखा कर कहा—"महा प्रभु! अरब के बादशाह ने इन घोड़ों को आपके पास भेजे है।"

"तू अब किस देश को जा रहा है!" रूपसिंह ने पूछा।

"मैं फिर लङ्का जा रहा हूँ।" व्यापारी ने कहा।

"तब इनको ले जाओ और लङ्का के राजा को हमारी तरफ़ से दे देना!" यह

कह रूपसिंह चला गया। व्यापारी ने लङ्का के राजा को सौ घोड़े देकर निवेदन किया कि वे ठाकुर रूपसिंह के उपहार हैं।

उपहार देखते ही राजा का हृदय बल्लियों कूदने लगा। रूपसिंह के उपहार तो कीमती हैं ही, उसका स्नेह तो उससे कहीं अधिक अमूल्य होगा—उसने सोचा। व्यापारी से रूपसिंह के शक्ल-सूरत के बारे में जानकर उसने अपनी इकलौती पुत्री का उससे विवाह करने का निश्चय किया। रूपसिंह के लिये राजोचित पोशाक, आभूषण वगैरह देकर उसने कई नौकर-चाकरों को व्यापारी के साथ भेजा।

रूपसिंह का ठिकाना आदि, व्यापारी को नहीं मालूम था। इसलिये उन लोगों को उसी जगह खड़ा किया, जहाँ वह स्वयं रूपसिंह की प्रतीक्षा किया करता था। शाम को रूपसिंह घोड़े पर आया।

व्यापारी ने रूपसिंह को लंका के राजा का सन्देश सुनाया। रूपसिंह ने लंका राजा द्वारा भेजे हुये आभूषण, कपड़े लेकर कहा कि वह कल इसी समय इसी जगह पर मिलेगा और चला गया।

तब लंका के राजा द्वारा भेजे हुये कपड़े और आभूषण पहिनकर, और उस दिन बेचे हुये लकड़ियों के पैसों से एक पालकी लेकर, उस पर चढ़ वह उस जगह पर गया। वहाँ उसके लिये व्यापारी और लङ्का राजा के नौकर-चाकर तैयार खड़े थे। सब मिलकर लङ्का देश के लिये रवाना हुये।

लङ्का की राज-कुमारी का विवाह रूप-सिंह से बड़े धूमधाम से हुआ। लङ्का के राजा का कोई लड़का तो था नहीं, इसलिये कुछ समय बाद रूपसिंह लङ्का की गद्दी पर बैठा।

अक़्ल के दुश्मन

एक गाँव में रामदयाल नाम का एक व्यक्ति रहा करता था। उसका न कोई निजी सम्बन्धी था, न घरबार ही। इसलिये एक किसान की लड़की से विवाह कर वह ससुराल में ही रहा करता था।

रामदयाल की पत्नी सुमति एकदम मूर्ख थी। उसकी माँ रामप्यारी भी कोई अक़्लमन्द न थी। एक दिन सुमति ने अपने बच्चे को हमेशा की तरह नहलाया-धुलाया, कपड़े पहिनाये, आँखों में सुरमा लगाया, सिर पर तेल लगा कर, झूले में झूला देने लगी। लोरियाँ गाने लगी। गाती गाती उसने बच्चे को झुलाना बन्द कर दिया और "अब मैं क्या करूँ!" कह कह कर रोने लगी।

रोना-धोना सुन, पिछवाड़े में काम करती रामप्यारी भागी भागी आई, और अपनी लड़की को रोता देखकर, उसने घबराते हुये पूछा—"क्या हो गया बेटी! जल्दी बताओ!" सुमति ने और ज़ोर से रोते हुए ऊपर अटारी पर रखे सन्दूक को दिखा कर कहने लगी—"मान लो, चूहों का पीछा करती करती वहाँ एक बिल्ली आ गई और उसका पैर लग सन्दूक नीचे गिर गया, तब मेरे बेटे का क्या होगा!" वह खूब ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

"सच है! तेरे लड़के पर कितनी भारी आफ़त आ पड़ी है!" कह रामप्यारी भी अपनी लड़की के साथ रोने-धोने लगी।

जब माँ और बेटी इस तरह रो रही थीं, बाहर से रामदयाल आ पहुँचा। उनके रोने का कारण सुनकर वह आग-बबूला हो गया।

'दुनियाँ में बहुत-से बेवकूफ़ों को देखा है; पर तुम माँ-बेटी जितना बेअक़्ल मैंने

बेनीराम भण्डारी

कहीं नहीं देखा। मैं अभी यहाँ से जाता हूँ। अगर मुझे इस दुनियाँ में तुम से अधिक कोई मूर्ख दिखाई दिया, तो वापिस आ जाऊँगा, वरना तुम्हारा मुँह भी न देखूँगा!" यह कह रामदयाल घर से चला गया।

एक दिन सवेरे वह एक गाँव में पहुँचा। गाँव के बाहर रामदयाल को एक अधेड़ आदमी दिखाई दिया। उसके हाथ में एक छोटी-सी टोकरी थी। वह उस टोकरी को सूर्य को दिखाकर घर में जाता, फिर बाहर आकर टोकरी को सूर्य की तरफ़ दिखाता। इस तरह उस व्यक्ति को घर के अन्दर-बाहर जाता देख, रामदयाल ने पूछा—"क्यों भाई! यह क्या काम कर रहे हो?"

"घर में दिन-रात अँधेरा रहता है। टोकरी में प्रकाश भरकर घर में डाल रहा हूँ! तीन दिनों से घर में कितनी ही टोकरियाँ रोशनी की डाली। मगर कोई फ़ायदा नहीं हुआ।" उस अधेड़ आदमी ने जवाब दिया। उसकी बेवकूफ़ी को देख कर रामदयाल ने पूछा—"तुम्हारे घर में हथौड़ा है? हो तो ज़रा यहाँ लाना!"

रामदयाल ने ठोक ठाककर घर की दीवार में एक छेद कर दिया।

"अब देखो, तुम्हारे घर में कैसी रोशनी आ रही है!" रामदयाल ने कहा।

रामदयाल फिर घूमने निकला। घूमते-घूमते वह एक गाँव में पहुँचा। उस गाँव में एक बढ़ई ने घर की ड्योढ़ी को गिरवा देने के लिये मज़दूरों को बुला रखा था।

"अरे! यह तो अच्छी, मज़बूत ड्योढ़ी नज़र आती है। क्यों तुड़वा रहे हो!" रामदयाल ने बढ़ई से पूछा।

"क्या करूँ भाई! पहिये, धुर, सब कुछ तैयार कर गाड़ी बनाई, पर वह तंग ड्योढ़ी से बाहर नहीं निकली जा सकती।

इसीलिये मज़दूरों को बुलाकर ड्योढ़ी गिरवा रहा हूँ।" बढ़ई ने कहा।

"अरे पागल हो गये हो क्या! सिर्फ़ इसीलिये अच्छी, पक्की ड्योढ़ी तुड़वा रहे हो! गाड़ी का एक एक हिस्सा अलग कर लो और बाहर ले जाकर मिला लो। फिर गाड़ी तैयार हो जायगी।" रामदयाल ने कहा।

रामदयाल की अक़्लमन्दी देख बढ़ई को आश्चर्य हुआ। मज़दूरों को भेजकर, रामदयाल के कहने के अनुसार उसने अपना काम पूरा कर लिया। फिर कुछ दूर जाने पर रामदयाल को एक बड़ा ही विचित्र दृश्य दिखाई दिया। उसे देख रापदयाल हँसी न रोक सका। एक चौगल में एक आदमी अटारी पर बैठा हुआ था। नीचे एक गाय थी। उसके गले में बँधी हुई रस्सी ऊपर बैठे हुये आदमी के हाथ में थी। वह रस्सी को ज़ोर से खींचता जाता और कहता जाता "आ— ऊपर आ। कितने दिन बिना कुछ खाये भूखी मरेगी। चार दिनों से भूखी मर रही है। अब भी अक़्ल नहीं आई।"

रामदयाल ने हँसी रोककर पूछा "क्यों भाई! क्या कर रहे हो! क्यों इस तरह गाय को सता रहे हो!"

"देखिये साहब! चार दिन पहिले मैंने इस गाय को खरीदा था। उसके लिये चारा खरीद कर मैंने होशियारी से अटारी पर रखा है। ऊपर आकर खाने के लिये कह रहा हूँ। पर वह हिलने का नाम नहीं लेती। अगर इसकी यह ज़िद रही, तो मुझे नहीं मालूम, वह कैसे जिन्दा रहेगी!" अटारी पर बैठे आदमी ने बताया।

'तू तो बड़ा बुद्धू नज़र आता है। कहीं गौवें अटारी पर चढ़ती हैं! तुझे अटारी में से भुस लाकर गाय को नीचे खिलानी चाहिये।' राम दयाल ने कहा।

अटारी पर बैठे उस आदमी को यह छोटी-सी बात चार दिन से नहीं सूझी थी। वह तुरंत अटारी पर से उतर, गौ के सामने घास-फूस रखने लगा। गौ भी उसको खाने लगी।

गाय का मालिक रामदयाल के पैरों पर पड़ कहने लगा। "भाई आपने मेरी गौ और मेरी रक्षा की है। मैं आपका उपकार कभी न भूलूँगा।"

तब रामदयाल मन ही मन यों सोचने लगा—

"संसार में इतने मूर्ख भी हैं, यह मुझे नहीं मालूम था। टोकरी में भर प्रकाश फेंकनेवाले, गाड़ी बाहर लाने के लिये दरवाज़ा तुड़वानेवाले, गाय को खिलाने के लिये अटारी पर चढ़ानेवाले व्यक्तियों से मेरी पत्नी कोई कम अक़्लमन्द नहीं है। अगर सच पूछा जाय तो बिल्लियाँ अटारी के ऊपर से चीज़ें गिराती ही रहती हैं। अगर सचमुच उतने ऊपर से सन्दूक गिर पड़े तो बच्चे को खतरा है।

यह बात सोचते ही रामदयाल के कदम घर की तरफ़ पड़ने लगे। और बाद में वह पत्नी-पुत्र के साथ आराम से रहने लगा।

जब भाग्य जगे तो ...

कोसल देश में तीन मित्र रहा करते थे। उनमें से दो—नन्द और सुनन्द धनी थे और तीसरा—आनन्द बहुत ही निर्धन था। वह रस्सी पेलकर जीवन-निर्वाह किया करता था। नन्द और सुनन्द ने, कुछ भी हो, उसे भी धनी बनाने की ठानी।

'अगर थोड़ी बहुत पूँजी हो, तो कोई भी धनी हो सकता है। इसलिये आनन्द को थोड़ा पैसा दिया जाय तो अच्छा होगा।' नन्द ने कहा।

'कितने धनी गरीब नहीं हो रहे हैं! यदि भाग्य ने साथ दिया, तो बिना पूँजी के भी लोग धनी हो जाते हैं!' सुनन्द ने अपना विचार प्रकट किया।

यह दिखाने के लिये कि उसकी ही बात सही है, नन्द ने अगले दिन आनन्द को सौ अशर्फ़ियाँ दीं। उसने आनन्द से उस पूँजी को लगाकर पैसा कमाने के लिये कहा। उनमें से दस अशर्फ़ियाँ खर्चे के लिये निकाल और बाकी पगड़ी में बांध ज़रूरी चीज़ों को खरीदने के लिये बाज़ार की तरफ़ चल पड़ा। बदकिस्मत की बात है, तब यकायक कहीं से कोई चील आई और आनन्द की पगड़ी में कुछ लिपटा पा उसे उड़ा ले गई। एक सौ नब्बे अशर्फ़ियाँ आनन्द इस तरह खो बैठा।

कुछ दिनों बाद नन्द और सुनन्द आनन्द के घर आये। उसकी परिस्थिति में कोई परिवर्तन न पा, उन्होंने उससे कारण पूछा

'मेरा भाग्य अच्छा नहीं है। सारी अशर्फ़ियाँ मैंने अपनी पगड़ी में रख ली थीं। परन्तु कोई चील आई और मेरी पगड़ी अचानक उड़ा ले गई।' आनन्द ने दुःख के साथ कहा।

महावीर प्रसाद

उसकी बात पर नन्द को तो विश्वास हो गया। पर सुनन्द को यकीन न हुआ। उसको सन्देह हुआ कि आनन्द ने पैसा फ़जूल खर्च कर दिया होगा। परन्तु नन्द ने फिर उसको दो सौ अशर्फ़ियाँ देते हुये सलाह दी—'कम से कम इस बार इसे कहीं लगाकर खूब पैसा कमाना।'

आनन्द ने फिर जितनी अशर्फ़ियाँ उसको निजी काम के लिये ज़रूरी थीं, अलग रख लीं, और बाकी उसने भुस की टोकरी की तह में सम्भालकर रख दीं। ज़रूरी चीज़ें खरीदने के लिये बाज़ार की ओर चल पड़ा। जब वह वापिस घर आया तो उसको भुस की टोकरी दिखाई न दी। पत्नी से पूछा।

'नमक बिकने के लिये आया था। पास पैसा न था। इसलिये भुस की टोकरी बेच मैंने दो सेर नमक खरीद लिया।'—आनन्द की पत्नी ने कहा। आनन्द को बहुत दुःख हुआ।

कुछ दिनों के बाद नन्द और सुनन्द ने उसके घर आ, गुज़री हुई घटना के बारे में सुना। आनन्द पहिले से भी अधिक गरीब दिखाई दिया। उसके कपड़े फटकर चीथड़े हो गये थे। जब उन्होंने कारण पूछा तो उसने कहा कि घर में सूई नहीं है।

सुनन्द ने तभी तभी बाज़ार में सुईयाँ खरीदी थीं। उनमें से एक सूई आनन्द को देते हुए कहा—"जा, इसे ले जाकर अपनी पत्नी से कपड़े की मरम्मत करवा ले!" बाद में नन्द और सुनन्द चले गये।

उसी दिन रात को पड़ोस में रहनेवाले मछियारे की पत्नी ने आकर आनन्द की पत्नी से कहा—"क्यों बहिन, तुम्हारे घर में कोई सूई मिल सकेगी? कल सवेरे ही

हमारे लोग, जाल लेकर मछलियाँ पकड़ने जा रहे हैं। जालों की मरम्मत करनी है। जाल में जो मछली पहिले फँसेगी, वह मैं तुम्हारे घर भिजवा दूँगी।"

आनन्द की पत्नी ने सूई दे दी।

अगले दिन शाम को जब मछियारा घर वापिस आया तो उसने अपनी लड़की के हाथ एक बड़ा मच्छ आनन्द के घर पहुँचवा दिया। जब आनन्द की पत्नी ने शाक बनाने के लिये उसको चीरा तो मच्छ के पेट में कोई शीशे जैसी चीज़ दिखाई दी। एक जौहरी ने जब उस शीशे की चीज़ से आनन्द के बच्चों को गली में खेलता देखा, तो उसने आनन्द से पूछा—"क्यों आनन्द! वह शीशे की चीज़ मुझे बेचोगे? सौ अशर्फियाँ दूँगा।"

आनन्द को झट शक हो गया कि वह शीशे की चीज़ बहुत कीमती होगी और उसने उसे बेचने से इनकार कर दिया। उसी दिन उसे ले जाकर उसने शहर में जौहरियों को दिखाया।

वह शीशे की चीज़ सचमुच बड़ी कीमती मोती थी। उसे एक बड़े जौहरी ने बीस हज़ार अशर्फियाँ देकर खरीदा। उस

धन से आनन्द ने घर-बार, ज़मीन-ज़ायदाद ख़रीदी। रस्सियाँ पेलने के लिये उसने लकड़ी के यन्त्र बनवाये। रस्सी बनाने का कारबार बड़े जोर-शोर से शुरू कर दिया। वह भी जल्द रईस हो गया।

जब उसके मित्र नन्द और सुनन्द को मालूम हुआ कि यकायक आनन्द धनी हो गया है, तो वे उससे मिलने आये।

"क्यों मेरी दी हुई पूँजी लगाकर ही तुम धनी हुये हो न! कहो भी हाँ!"—नन्द ने पूछा।

आनन्द ने जो कुछ जैसे गुज़रा था, उसको शुरू से अन्त तक उन्हें कह सुनाया।

"देखा, भाग्य ने जब साथ दिया तो आनन्द मेरी दी हुई सुई के कारण ही इतना धनी हो गया—" सुनन्द ने कहा।

इस बार नन्द को विश्वास नहीं हुआ। उसने सोचा कि आनन्द उसी की पूँजी से रईस हुआ है और वह यह छुपाने की कोशिश कर रहा है। तीनों मित्र तब आनन्द के नये चौपाल को देखने के लिये निकले। जब वे पिछवाड़े में गये, तो उन्होंने देखा कि आनन्द के बच्चों ने पेड़ पर से एक घोंसला गिरा दिया था। उस घोंसले में उन्हें उसकी पगड़ी दिखाई दी। पगड़ी के एक छोर में एक सौ नब्बे अशर्फ़ियाँ बँधी मिलीं।

वे तब वहाँ गये, जहाँ बैल बँधे हुये थे। उसी समय एक नौकर भुस की एक टोकरी ख़रीद कर लाया था। जब वह टोकरी से भुस निकालकर बैलों के सामने डाल रहा था, तो उसके हाथ में कुछ अशर्फ़ियाँ लगीं। ये वही एक सौ नब्बे अशर्फ़ियाँ थीं, जो आनन्द ने खोयी थीं।

जब अच्छे दिन आते हैं, तो सूई भी सौभाग्य का कारण बन सकती है!" नन्द भी सुनन्द की बात से सहमत हो गया।

[१२]

[समरसेन ने अपने साथियों के साथ भागना शुरू कर दिया था न ? कुम्भाण्ड उसका पीछा कर रहा था। सैनिकों को पेड़ पर चढ़ने पर छोड़, अकेला समरसेन गुफा में घुसा। गुफा के पिछवाड़े में एक खुफ़िया दरवाज़ा था। ज्यों ही समरसेन ने उसको खोला तो दो हट्टे-कट्टे आदमियों ने उस पर हमला किया, और अन्दर लाकर उसे बांध दिया। अब आगे पढ़िये....]

जब अचानक दो हट्टे-कट्टे आदमी समरसेन पर झपटे तो वह हक्का-बक्का रह गया। उसके मुख से चूँ तक नहीं निकली। इस बीच में, गुफा के सामने से शेर का भयङ्कर गर्जन सुनाई दिया। झट उन दोनों ने समरसेन को पीठ पर डाला और वहाँ से भागने लगे। उन दोनों ने ही उसे बाँध रखा था।

समरसेन कुछ कर नहीं सकता था; इसलिये आसपास का इलाका ध्यान से देखने लगा। चारों तरफ़ पहाड़ और घाटियाँ थीं। वे दोनों व्यक्ति पहाड़ पर से नीचे उतर रहे थे। कहीं दूर झिलमिलाते दिये जल रहे थे।

'तुम कौन हो? मुझे क्यों यों बाँध रखा है?' समरसेन ने साहस करके पूछा।

उन दोनों ने एक दूसरे की तरफ़ देखा, मगर समरसेन के सवाल का जवाब न दिया। समरसेन ने वह प्रश्न फिर पूछा। तब उनमें

से एक ने सिर्फ़ इतना कहा कि 'उसका जवाब हमारे सरदार से पूछना!'

समरसेन ने सोचा कि उनसे पूछने से कोई फ़ायदा नहीं है। जब पहाड़ से नीचे वे घाटी में उतरे, तो उन्होंने समरसेन को नीचे रखा, और उसके हाथ-पैरों में बंधी हुई रस्सियों को खोल दिया। समरसेन को बीचों बीच रख अगल-बगल में वे दोनों आगे बढ़ने लगे।

उस प्रकार कुछ दूर चलने के बाद दिये कुछ पास नज़र आने लगे। पेड़ पर बैठ पहरा देता हुआ व्यक्ति उनको देख कर ज़ोर से चिल्लाया—'साथी किसी को पकड़ कर ला रहे हैं। रस्ता दो!' उसके चिल्लाने के साथ और कइयों का भी चिल्लाना सुनाई दिया। यह सब देख समरसेन को अचरज ही नहीं हुआ; बल्कि डर भी लगा।

आखिर उसको वे दोनों एक घर में ले गये। किवाड़ खटखटाते ही किवाड़ खुल गये। समरसेन को एक कोठरी में ले जाकर उसके हाथ-पैर फिर रस्सी से बाँध दिये। 'आज रात यहीं पड़े रहो! सवेरे होते ही तेरी खबर ली जायेगी!'—कहकर वे चले गये।

समरसेन रात भर सो न सका। बहुत सोचा। पर वह यह न जान सका कि इन आदमियों ने उसको क्यों बाँध रखा है! इतना उसको ज़रूर मालूम हो गया था कि इस द्वीप में सिवाय कुम्भाण्ड और उसके, और भी उसके समान नागरिक यहाँ बसे हुये हैं। जिन लोगों ने उसके हाथ-पैर बाँध दिये थे, उनकी वेषभूषा से लगता था कि वे जङ्गली नहीं थे।

इसी उधेड़बुन में समरसेन ने उस काल-कोठरी में सारी रात काट दी। मुर्गों ने 'कुकुड़कू....' करना शुरू किया। सवेरा

हो रहा था। थोड़ी देर में मन्दिरों के घण्टे सुनाई देने लगे। उसी क्षण किसी के आने की आहट भी सुनाई दी। फिर किवाड़ खुलने की ध्वनि आई।

समरसेन ने किवाड़ की तरफ़ देखा। दो नये व्यक्ति तलवार लिये, आँखें बड़ी करते हुये उसकी तरफ़ बढ़े। समरसेन ने निडर हो उनकी तरफ़ देखते हुये पूछा—

'क्या मन्दिर में ही ये घंटे बज रहे हैं'! उन नये व्यक्तियों में से एक ने हँसते हुये कहा—'ये मन्दिर के घंटे नहीं हैं, मृत्यु के नगाड़े हैं। अगर तू व्याघ्रदत्त के प्रश्नों का ठीक उत्तर न दे पाया, तो तू समझ लेना कि आज तेरी सौ वर्ष की आयु पूरी हो गई है।'

'व्याघ्रदत्त कौन है! वह उससे कौन-सा भेद जानना चाहता है'! इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर समरसेन न पा सका। उन भयङ्कर, क्रूर व्याघ्रदत्त के अनुचरों से पूछने पर कुछ न मालूम हो सकेगा, यह समरसेन जान गया था। समरसेन के बन्धन खोले गये। व्याघ्रदत्त के सेवक उसको काल-कोठरी से बाहर ले आये। "मुझे कहाँ ले जा रहे हो!" समरसेन ने आखिर साहस करके उनसे

पूछा। तब उन्होंने डराते-धमकाते कहा—'हम तुझे अपने सरदार व्याघ्रदत्त के पास ले जा रहे हैं। जरा होश संभालकर बात करना। समझे।'

कुछ दूर चलने के बाद सब एक बड़े मकान में घुसे। वहाँ कई हथियारबन्द सिपाही भी दिखाई दिये। उनके पास तरह तरह के शस्त्र थे।

उनको देखते ही समरसेन ने मन ही मन सोचा—'ये सैनिक नहीं हैं। इनके हाव-भाव, वेषभूषा, बोलने-चालने के तरीके से तो ऐसा लगता है, जैसे ये कोई डाकू-डकैत हों!'

इतने में एक बड़ा दरवाजा खुला। सामने एक ऊँची वेदिका पर व्याघ्रदत्त बैठा हुआ दिखाई दिया। समरसेन को देखते ही वह कहने लगा—

'समरसेन! मैं तुम्हारा व्याघ्रदेश की तरफ़ से स्वागत करता हूं। शायद तुम्हारे पूर्वज और मेरे पूर्वज कुण्डलनी द्वीप के एक ही नगर में रहते थे। उनकी सन्तान का इस मन्त्र द्वीप में इस प्रकार मिलना देखकर क्या तुम्हें आश्चर्य नहीं हो रहा है?'

जब से समरसेन को बेहथियार कर बांधा गया था, तब से उसको हर घटना पर आश्चर्य हो रहा था। यही आश्चर्यजनक बात थी कि आखिर उसे किसी ने क्यों बाँधा। कुण्डलिनी द्वीप का नाम ले, पूर्वजों के निवास स्थान का स्मरण कराते हुये व्याघ्रदत्त की चाल-ढाल को देखकर भी उसको आश्चर्य हो रहा था।

'मुझे तो यहाँ सब कुछ आश्चर्यजनक लग रहा है।'—समरसेन ने निर्भय हो कहा—'मुझे आपके अनुचरों ने क्यों बाँधा था? मुझे आपके पास वे क्यों लाये हैं? आप इस द्वीप में कब आये थे? यह सब देख मुझे अचरज हो रहा है।'

'समरसेन! इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है। शमन द्वीप के राजा शाक्तेय ने और देशों पर जब हमला करना शुरू किया तो हमारे देश पर भी कब्जा कर लिया। हमारे पूर्वजों में से कुछ बलवान व्यक्तियों को अपना गुलाम बना कर वह और देशों पर आक्रमण करने के लिये जहाजों में निकल पड़ा। यह तुझे शायद मालूम होगा कि उसकी मौत इसी द्वीप में हो गई थी। हमारे पूर्वज जो उसके गुलाम बना लिये गये थे, 'उसकी मौत के बाद आज़ाद हो गये और इसी द्वीप में रहने लगे। कुछ हद तक हमारे पूर्वजों की स्वतन्त्रता का कारण, शाक्तेय के दो मान्त्रिक शिष्यों का आपसी कलह और द्वेष भी था। उन्हें तो तू जानता है न!' व्याघ्रदत्त ने पूछा।

'जानता हूँ।' समरसेन ने झट जवाब दिया। व्याघ्रदत्त जो कुछ कह रहे थे, उसे सच तो लगा, पर उसे सुनकर समरसेन को आश्चर्य भी हो रहा था।

'तो अब यह बता कि उस शाक्तेय का त्रिशूल कहाँ है! चण्डीदेवी के दिये हुये इस त्रिशूल की शक्ति के बारे में तो तू ने सुन ही रखा होगा! उसके बारे में बतायेगा कि नहीं!' व्याघ्रदत्त ने पूछा।

ये प्रश्न सुनते ही समरसेन भौचक्का रह गया। व्याघ्रदत्त ने जो कुछ शमन द्वीप के राजा शाक्तेय के बारे में कहा था, वह स्वयं समरसेन नहीं जानता था। चतुर्नेत्र ने कभी अपने गुरु शाक्तेय के बारे में कहा जरूर था, मगर शाक्तेय के कुण्डलिनी द्वीप पर किये आक्रमण के बारे में उसने कुछ न सुना था। चण्डीदेवी द्वारा शाक्तेय को दिये हुये त्रिशूल के बारे में तो वह बिल्कुल कुछ जानता ही न था।

"व्याघ्रदत्त! मैं आपके किसी प्रश्न का भी जवाब नहीं दे सकता हूँ। आपने शायद भूलकर मुझे पकड़वाया है। न तो शाक्तेय के बारे में, न उसके दिव्यशक्तिवाले त्रिशूल के बारे में ही मैं कुछ जानता हूँ।"—समरसेन ने कहा।

समरसेन का जवाब सुन व्याघ्रदत्त आग बबूला हो उठा, "तू बेचारा बनकर मुझे धोखा नहीं दे सकता। मैं तुझे कल दस बजे तक समय देता हूँ। इस बीच में सोच समझकर सच कहने में ही तेरा कल्याण है। वरना तेरी बोटी बोटी कटवाकर चामुण्डी देवी पर चढ़वा दूँगा। तेरी रक्षा करनेवाला यहाँ कोई नहीं है!"—कहते कहते व्याघ्रदत्त गुस्से में जोर से गरजा।

समरसेन को काटो तो खून नहीं। वह बुरी तरह घबरा गया। समरसेन यह ताड़ गया कि व्याघ्रदत्त को यह मालूम नहीं कि वह ऐसी बातों के बारे में मुझसे पूछ रहा है, जिनके बारे में मैं कुछ नहीं जानता हूँ। परन्तु अपनी बातों पर व्याघ्रदत्त को विश्वास कराना उसके बस के बाहर की बात थी।

व्याघ्रदत्त की आज्ञा सुन समरसेन को दो सैनिक एक काल-कोठरी में ले गये। वहाँ

हाथ पैर बाँधकर, उसको नीचे फेंक दिया। एक तरफ रौद्र रूपी भद्र चामुण्डी की मूर्ति थी। समरसेन को वह मूर्ति दिखाते हुये एक सैनिक ने कहा—

"कल सवेरे दस बजे तक हमारे सरदार को तू ने सच न बताया तो उस देवी के लिये तेरी बलि दे दी जायगी। खूब सोच समझ ले।" यह कह वे वहाँ से चले गये।

समरसेन भूख और बन्धनों के दर्द से कराहने लगा। उसे बड़ा कष्ट होने लगा। उसने सोचा कि सवेरे वह मौत से न बच सकेगा। आपत्ति के समय सिवाय चतुर्नेत्र के,

उसकी मदद करनेवाला कोई न था। परन्तु चतुर्नेत्र को कैसे मालूम हो कि वह आफ़त में फँसा हुआ है!

समरसेन इसी फ़िक्र में, काफ़ी देर तक बिना हिले-डुले पड़ा रहा। आधी रात के समय उसको किसी के किवाड़ खटखटाने का शब्द सुनाई दिया। समरसेन ने उस तरफ़ देखा! दो हट्टे-कट्टे मनुष्य तल्वार लिये अन्दर घुसे। समरसेन को लगा कि उसको मारने के लिये व्याघ्रदत्त के दोनों सैनिक आ रहे हैं।

उन दोनों ने समरसेन के पास आ उसके बन्धन खोल दिये। समरसेन सोच ही रहा था कि न जाने अब क्या होगा कि उन दोनों ने उसको साथ चलने के लिये कहा। वे तेज़ी से आगे बढ़ने लगे।

जब वे यों तेज़ी से आगे बढ़ रहे थे, तब उन्हें व्याघ्रदत्त के दो अनुचर सामने से आते हुये दिखाई दिये। झट उन दोनों ने पासवाले कमरे में समरसेन को धकेला। वहाँ अन्धेरा था। उन्होंने बतलाना शुरू किया—

"हम तुम्हारे मित्र हैं। व्याघ्रदत्त के सैनिक पहरे पर घूम रहे हैं। ज्योंही वे इस तरफ़ आवें तो हम इस अन्धेरे में से उन पर कूदकर उनका काम तमाम कर देंगे। इसलिये तैयार रहो।"

थोड़ी देर बाद व्याघ्रदत्त के पहरेदार उनके पास आये। अन्धेरे में से समरसेन और उसके साथी उन पर कूदे और उनके गले धर दबोचे। गला घोंटकर उनको किनारे लगा दिया। आवाज़ तक न हुई। तब उनकी लाश को उन्होंने पासवाले पुराने कुँये में फेंक दिया।

तब उन्होंने पहाड़ी पगडंडियों से चलना शुरू किया। सवेरे सवेरे होते वे एक गाँव में पहुँचे। (अभी और है)

इशारोंवाला पण्डित

काशी में एक पण्डित रहा करते थे। उनको हर कोई 'इशारोंवाला पण्डित' कहकर पुकारा करता था। वे यह प्रचार किया करते थे कि मनुष्यों के लिये यह अच्छा होगा यदि अपने भाव भाषा द्वारा न प्रकट कर संकेतों द्वारा प्रकट किया करें।

एक बार उस पण्डित ने राजा के पास जाकर भी यही बात कही। राजा ने मन ही मन हँसकर पूछा—'यही बात कहने के लिये ही आप मेरे पास इतनी दूर आये हैं! मैंने तो बहुत पहिले ही शिवगङ्गपुर की पाठशाला में 'संकेत शास्त्री' की नियुक्ति कर दी है।'

मजाक में कही हुई राजा की बात को पण्डित ने न समझा। उसने सविनय कहा—'आप बहुत दूरद्रष्टा हैं। बचपन में ही अगर बच्चों को 'संकेत शास्त्र' का अभ्यास कराया गया, तो मनुष्यों का बहुत कल्याण होगा। मैं उस संकेत शास्त्री के दर्शनार्थ जा रहा हूँ! मुझे आज्ञा दीजिये!' राजा को नमस्कार कर 'इशारोंवाला पण्डित' शिवगङ्गपुर के लिये रवाना हुआ।

इशारोंवाला पण्डित शिवगङ्गपुर के लिए इस प्रकार निकल पड़ेगा, राजा ने कल्पना भी न की थी। राजा ने सोचा, अगर वह पण्डित शिवगङ्गपुर गया, तो उसकी बात झूटी साबित होगी। इसलिये उसने पहिले ही शिवगङ्गपुर अपना एक नौकर भेजा।

उसने पाठशाला के कर्मचारियों से जाकर कहा कि वहाँ इशारोंवाला पण्डित आयेगा; उसे जैसे तैसे भुलावा देकर घर भेज देना। यह राजाज्ञा है। कर्मचारियों को अपनी जिम्मेवारी मालूम हो गई।

के. पी. गोयल

दो तीन दिन बाद इशारोंवाला पण्डित शिवगङ्गपुर पहुँचा। वहाँ पाठशाला के कर्मचारियों ने उनका आदर-सत्कार कर कहा—'महाराज! हमारे संकेत शास्त्री देशाटन करने के लिये गये हुये हैं। महीने भर में आयेंगे। इस बीच में उनके आने की उम्मीद नहीं है।'

'खैर! इतनी दूर आकर बिना उनसे मिले कैसे जाया जाय? जब तक देशाटन समाप्त कर न आते हैं, तब तक मैं उनकी यहीं प्रतीक्षा करूँगा!' इशारोंवाले पण्डित ने कहा।

पाठशाला के कर्मचारियों ने भी जान लिया कि यह पण्डित ऐसे-वैसे छोड़ने वाला नहीं है। अगले दिन उन्होंने पाठशाला के नौकर को पण्डित का वेश पहिनाया। उसको सब कुछ बताकर उन्होंने सलाह दी—'यह इशारोंवाला पण्डित जो कुछ संकेतों द्वारा पूछे, उसका संकेतों द्वारा ही जवाब देना। चाहे कुछ भी हो, अपनी जबान न खोलना।'

बाद में उन्होंने इशारोंवाले पण्डित से कहा—'महाशय! हमारे संकेत-शास्त्री देशाटन करके वापिस आ गये हैं। वे उस कमरे में बैठे हुये हैं। आप उनसे मिल सकते हैं।'

इशारोंवाला पण्डित कमरे में गया। वहाँ शास्त्री शाल ओढ़कर शान से बैठा हुआ था। वह काना था। इशारोंवाले पण्डित ने उसको एक अंगुली दिखाई। तब काने शास्त्री ने दो अंगुलियाँ दिखाईं। फिर इशारोंवाले पण्डित ने तीन अंगुलियाँ दिखाईं। तब काने शास्त्री ने गुस्से में मुट्ठी दिखाई।

तब इशारोंवाले पण्डित ने मुस्कुराते हुये एक बेर का फल काने शास्त्री को दिखाया।

तब काने शास्त्री ने रोटी का एक टुकड़ा दिखाया। तुरंत इशारोंवाला पण्डित उठा। तो बाहर खड़े हुये पाठशाला के कर्मचारियों ने उनसे पूछा—'महाशय! हमारे संकेत शास्त्री के बारे में आपकी क्या राय है?' तब इशारोंवाले पण्डित ने कहा—

'आपके संकेत शास्त्री तो बहुत ही योग्य और समर्थ व्यक्ति हैं। ऐसा मालूम होता है, ये बड़े तत्वज्ञानी भी हैं। मैंने यह बताने के लिये कि भगवान एक ही हैं, एक अंगुली उठाकर दिखाई। उन्होंने दो अंगुलियां दिखाकर, बताया, 'नहीं, शिव, विष्णु दो हैं'। तब यह दिखाने के लिये कि ब्रह्मा को मिलाकर त्रिमूर्ति तीन होते हैं, मैंने तीन अंगुलियां दिखाईं। यह देख उन्होंने मुट्ठी बांधकर यह दिखाया कि तीनों एक ही हैं।'

फिर मैंने यह बताने के लिये कि भगवान बहुत कृपालु हैं, उनका मनुष्य मात्र को दिया हुआ बेर का फल सबसे अधिक स्वादिष्ट फल है; मैंने एक बेर का फल दिखाया। तब तत्वज्ञानी संकेत शास्त्री ने रोटी का टुकड़ा दिखाकर यह निरूपित किया कि रोटी ही बेर के फल से अच्छी

है, और सबके खाने के लायक है। सर्वोपयोगी रोटी का टुकड़ा ही श्रेष्ठ है, उन्होंने यह परम तत्व मुझे बताकर कृतार्थ किया।" यह कह वे चले गये। उनके चले जाने के बाद पाठशाला के कर्मचारियों ने संकेत शास्त्री का वेश पहिने हुये नौकर को बुलाकर पूछा कि क्या गुज़रा था।

"महाराज! वह पण्डित तो बहुत ही दुष्ट मालूम होता है। कमरे में आते ही मुझे चिढ़ाने के लिये, एक अंगुली दिखाकर इशारा किया कि तू काना है न? मुझे तब भी गुस्सा न आया, फिर उसे दिखाने के लिये, तेरी दो आँखों से मेरी एक आँख ही अच्छी है मैंने दो अंगुलियाँ दिखाईं। तब यह समझाने के लिये, तेरी एक आँख और मेरी दो आँखें मिलाकर तीन होती हैं; उसने तीन अंगुलियाँ दिखाईं। उसको वैसा करना देखकर मैं आग बबूला हो गया। फिर कभी तूने ऐसा किया तो तेरी नाक पर घूँसा जमा दूँगा, यह बताने के लिये, अंगुलियाँ मोड़कर मैंने मुक्का दिखाया। मुक्का देखकर उसके छक्के छूट गये। मुझे खुश करने के लिये उसने एक बेर का फल दिखाकर मुझे घूस देनी चाही।"

"मुझे तेरी घूस की ज़रूरत नहीं है। तेरा बेर किसको चाहिये? भला मेरी रोटी के टुकड़े के सामने वह क्या चीज़ है, मैंने एक रोटी का टुकड़ा दिखाया।

उसे देखकर उस दुष्ट ने सोचा कि कोई फ़ायदा नहीं है, हाथ जोड़कर, नमस्कार कर कमरे से बाहर चला आया।"

पाठशाला के कर्मचारी इस घटना के दो वृत्तान्त सुनकर ठट्ठा मारकर हँसने लगे। हँसते हँसते उनके पेट फूल गये।

जब यह बात राजा को बताई गई, तब वह भी खूब हँसा।

बहुत समय पहिले पटना नगर के पास एक ब्राह्मण रहा करता था। उसके बारह वर्ष का एक लड़का था। पद-चिन्हों को पहिचानने में वह बहुत होशियार समझा जाता था। पत्थर पर भी अगर कोई चले तो उसके पैरों के चिन्हों को वह आसानी से जान जाता था। क्योंकि उस में यह खास होशियारी थी, उसके साथी उसको "सूक्ष्म दृष्टि" कहकर पुकारते थे।

जिस गाँव में ब्राह्मण रहता था, वहाँ उसका गुज़ारा हो नहीं पाता था। इसलिये वह अपने लड़के को लेकर पैदल पटना चला आया। लड़के को महल में ले जाकर ब्राह्मण ने राजा से निवेदन किया—'महाराज! मेरा लड़का सूक्ष्मदृष्टि पग-चिह्नों के पहचानने में बहुत ही दक्ष है। अगर आप उसको अपने महल में रख लें, तो चोरों का डर जाता रहेगा!' वैसे तो राजा बहुत लालची था। फिर उन दिनों चोरों का डर भी बहुत अधिक था। इसलिये सूक्ष्मदृष्टि को अपने महल में रखने का राजा ने निश्चय किया। उसने ब्राह्मण से वेतन आदि के बारे में पूछा—

'महाराज! मेरे लड़के जितना सूक्ष्मदृष्टि वाला व्यक्ति इस संसार में दूसरा कोई नहीं है। इसलिये आप उसको रोज़ सौ मुहरों का वेतन दिलवाइये!' ब्राह्मण ने कहा।

राजा को यह तनख्वाह अधिक मालूम हुई। मगर ब्राह्मण ने इससे कम लेने के लिये नहीं माना। राजा ने लाचार हो सूक्ष्मदृष्टि को सौ मुहरों के वेतन पर महल में रख लिया। यह बात सुनते ही शहर के बड़े बड़े चोरों के चेहरे फीके पड़ गये। उन्होंने महल की तरफ़ देखना तक छोड़ दिया।

प्रेमा मस्तानी

कुछ समय बीत गया। सूक्ष्मदृष्टि रोज महल में जाता, और अच्छा खाता-पीता। बगीचे में बैठ शतरंज खेलता। घर जाते वक्त, रोज शाम को खज़ाने से सौ मुहरें ले आया करता। कई महीने बीत गये। पर राजमहल में एक बार भी चोरी न हुई।

यकायक पटना राजा को सन्देह हुआ—"यह ब्राह्मण का लड़का, जो रोज सौ मुहरों का वेतन पा रहा है, वस्तुतः यह चिन्हों को पहिचान सकता है कि नहीं, अभी तक तो यह साबित हुआ नहीं है। सिवाय उसके पिता के कथन के, और कोई प्रमाण भी नहीं है। अगर चोरी हुई तो वह चोरों को पकड़ सकता है कि नहीं, यह जानने के लिये मौका ही कहाँ आया!"

राजा ने मन्त्री से भी बातचीत की। दोनों ने मिलकर लड़के की परीक्षा लेने का निश्चय किया। रात को उन्होंने खज़ाने में स्वयं चोरी की। अनगिनित जवाहरात, मुहरें वगैरह, उन्होंने थैलों में बांध लीं। थैलों को लेकर राजमहल की चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा की। तब बगीचे में से होकर, राजमहल की चार-दिवारी के ऊपर से कूदकर बाहर जा, पासवाले कुयें में थैले फेंक, घर चले गये।

सवेरे यह बात फैल गई कि खज़ाने में चोरी हो गई है। राजा और मन्त्री ने सूक्ष्मदृष्टि को बुलाकर आज्ञा दी कि चोर और चोरी गये हुये माल को पकड़कर दिखाये। सूक्ष्मदृष्टि पहिले-पहल खज़ाने में गया।

उसको न केवल दो व्यक्तियों के पद-चिन्ह ही दिखाई दिये, परन्तु उनके पैरों की रेखायें भी साफ़ साफ़ दिखाई पड़ीं। उनके आधार पर उसको मालूम हो गया कि राजा और मन्त्री ने उसको परखने के लिये ही चोरी की यह चाल चली है। पर चूँकि

चोरी गये माल का पता लगाना था, इसलिए वह पैरों के चिन्हों को देखता देखता चलता गया। वह भी राज महल के चोरों ओर तीन बार घूमा। बाद में चार-दिवारी फांदकर कुँये के पास गया।

'इस कुँये में चोरी गया माल मिल सकता है; चूँकि चोरों के पद-चिन्ह यहाँ से फिर राज महल की ओर जाते हैं।'— सूक्ष्मदृष्टि ने कहा।

झट राज सेवक कुँये में कूदकर थैलों को बाहर निकाल लाये।

'वाह! तुम तो खूब अक़्लमन्द हो। पर अभी तक तो सिर्फ़ चोरी के माल का ही पता लगा है। चोरों का भी तो पता लगाओ!' राजा ने सूक्ष्मदृष्टि से कहा।

'महाराज! जाने दीजिये। चोरी का माल अब मिल ही गया है। चोरों की फ़िक्र मत कीजिये!' सूक्ष्मदृष्टि ने कहा।

'नहीं वैसा न होगा। चोरों को पकड़ने के लिये ही तुम्हें रोज सौ मुहरों का वेतन दिया जाता है।' राजा ने कहा।

'महाराज! इससे पहिले कि चोरी का माल कहाँ है, मैंने पद-चिह्नों को देखकर यह जान लिया था कि चोर कौन हैं!' सूक्ष्मदृष्टि ने कहा।

'तो बताओ, वे कौन हैं? उनको तुरंत दण्ड दूँगा।' राजा ने सूक्ष्मदृष्टि के सामर्थ्य का विश्वास न करते हुये कहा।

'आप मुझसे क्यों कहने के लिये कहते हैं? दो ने मिलकर यह चोरी की है। उन दोनों में आप एक हैं और दूसरे महा-मन्त्री।' सूक्ष्मदृष्टि ने कहा।

सूक्ष्मदृष्टि की बुद्धिमत्ता को देखकर, राजा ने उसका वेतन दुगुना कर दिया।

तीन पण्डित

एक गाँव में चार नवयुवक रहा करते थे। वे लुटपन से साथी थे। इनमें से तीन पण्डित के पास शिक्षा पा सब विद्याओं में पारंगत हो गये। एक काला अक्षर भैंस बराबर ही रह गया। उसको यद्यपि शास्त्र वगैरह नहीं आते थे, तथापि वह लौकिक ज्ञान में बहुत होशियार था।

सब विद्याओं को सीखकर तीनों नवयुवक देशाटन के लिये निकले। राजा-महाराजाओं के पास अपना पाण्डित्य दिखाकर वे धन-धान्य कमाना चाहते थे। उनके साथ साथ चौथा नवयुवक भी निकला। कुछ दूर जाकर उन तीन पण्डितों को चौथे व्यक्ति का साथ आना न भाया। सब शास्त्रों में निखट्टू यह भला हमारे साथ क्यों! उन लोगों ने सोचा।

'अरे भाई! जा, तू वापिस जा। तुझ जैसा भोंदू इस संसार में कोई न होगा। इसलिये तेरे लिये राजाओं का आश्रय मिलना असंभव है।' उन्होंने बताया।

तिस पर चौथे नवयुवक ने उनको मनाते हुये कहा—'मुझे भी साथ आने दो। हम सब लुटपन के साथी जो हैं! अगर मुझे राजा के यहाँ आश्रय न मिला, तो क्या हुआ! मित्रों का स्वागत-सम्मान होता देख सन्तुष्ट हो लूँगा।'

उन तीनों ने सोचा कि उससे पिंड छुड़ाना मुश्किल है, उसको चुपचाप साथ आने दिया। कुछ समय बाद चारों के चारों एक जङ्गल में पहुँचे। वहाँ उन्हें शेर-

कुमारी वसुन्धरा

का एक अस्थि-पंजर दिखाई दिया। उसको देखकर उन तीनों में से एक शास्त्रज्ञ ने रुककर कहा—'यह जो अस्थि-पंजर दिखाई दे रहा है हो न हो वह शेर का है।

हमें अपने पाण्डित्य को परखने का भला इससे अच्छा मौका कब मिलेगा? मैं अभी इस बिखरी हड्डियों को जोड़-जाड़कर एक अच्छा सा अस्थि-पंजर तैयार करता हूँ।'

उसने हड्डियों को मिला जुलाकर शीघ्र ही एक अस्थि-पंजर तैयार कर दिया। तब दूसरे पण्डित ने कहा—'मैं इस अस्थि-पंजर में अपनी मन्त्र-शक्ति द्वारा हाड़-मांस रखता हूँ।' उसने अपने निश्चय के अनुसार अस्थि-पंजर में हाड़-मांस डाल दिया।

तब तीसरे पण्डित ने, दूसरों को हटाते हुये आगे आकर कहा—मैं शेर में प्राण डाल दूँगा।'

उनकी बातें सुन चौथा नवयुवक घबरा गया। उसने तीसरे पण्डित के पाँव पकड़ते हुये कहा—'यह तो तुमको मालूम ही है कि शेर क्रूर जन्तु है! उसको प्राण देना बहुत खतरनाक काम है!'

तीसरे पण्डित को उसकी बातें जँची नहीं। तू चाहता है कि मैं अपनी सीखी हुई विद्या का उपयोग न करूँ! तेरा क्या इरादा है! इतनी मेहनत करके जो कुछ सीखा है, वह भला कब काम आयेगा!' उसने चौथे नवयुवक को कहा।

'खैर! तुम्हारी मर्ज़ी! पहिले मुझे पेड़ पर चढ़ने दो!' कहता हुआ चौथा नवयुवक पेड़ पर चढ़ गया।

तब तुरंत तीसरे पण्डित ने शेर में मन्त्र-शक्ति द्वारा प्राण डाल दिये। वह शेर गरजता हुआ तीनों पर कूदा और उसने उनका काम तमाम कर दिया।

पाँच रोटियाँ

एक बार हीरासिंह और रामलाल नाम के दो राहगीर कहीं दूर जाते जाते एक गाँव में एक गरीब बुढ़िया के घर मिले। जब वे सवेरे उठकर जाने लगे, तो बुढ़िया ने उन दोनों को जौ की रोटियों की पोटली बाँध कर दी। हीरासिंह कुछ उदार दिल का आदमी था, परन्तु रामलाल काफ़ी कंजूस था। इसीलिये गरीब बुढ़िया ने हीरासिंह की पोटली में तीन रोटियाँ रखी थीं, और रामलाल की पोटली में केवल दो ही।

कुछ दूर तक दोनों का रास्ता एक ही था। हीरासिंह और रामलाल दोपहर होते होते तालाब के किनारे एक पेड़ के नीचे पहुँचे। जब उन्होंने तालाब में हाथ-मुँह धोकर, रोटी खाने के लिये पोटलियाँ खोलीं तो देखा कि हीरासिंह की पोटली में तीन रोटियाँ थीं और रामलाल की पोटली में दो ही।

'देखा, गरीब बुढ़िया ने पक्षपात किया है। मेरी पोटली में सिर्फ़ दो ही रोटी रखी हैं!' रामलाल ने कहा।

हीरासिंह ने हँसकर कहा—'क्या हम दो रोटी भी खा सकेंगे! खैर, खाओ भी! अगर खाने की इच्छा हुई, तो दोनों पाँचों रोटियाँ आपस में बराबर बाँट लेंगे। मुझे तो ऐसा करने में कोई एतराज़ नहीं है।'

वे भोजन करने के लिये बैठे ही थे कि कहीं से पेड़ के नीचे केवलसिंह नाम का तीसरा राहगीर भी आ पहुँचा।

"भाइयो! मैं भूख से मरा जा रहा हूँ। यदि आपने मुझे भी बचाकर कुछ दिया तो मैं आपका उधार नहीं रखूँगा"—केवलसिंह ने कहा।

"आओ, तुम भी हमारे साथ खा लो। हमारे पास की रोटियाँ तीनों के लिये काफ़ी होंगी।" हीरासिंह ने कहा।

रामसुख पाँडे

उसके पूछते ही केवलसिंह भी उसके साथ बैठ गया। रोटियों को तीनों ने आपस में बाँटकर खाया और तालाब से पानी पी लिया। केवलसिंह ने दोनों के सामने अपनी कृतज्ञता प्रकट की, और जाते जाते हीरासिंह के हाथ में पाँच आने रखता गया। हीरासिंह ने बहुत मना किया, पर केवल सिंहने न माना। वह अपने रास्ते पर चला गया।

हीरासिंह ने पाँच आनों में दो आने निकालकर रामलाल को देते हुये कहा—'यह लो, यह तुम्हारा हिस्सा है। मेरी तीन रोटियाँ थीं, और तुम्हारी दो। इस कारण तुमको दो ही आने मिलना सही है।'

'यह तो सरासर अन्याय है। केवलसिंह को हमने रोटियाँ बेची थोड़ी थीं! वही कृतज्ञतापूर्वक हमें पाँच आने की रक़म दे गया है। उसमें आधी तुम्हारी और आधी मेरी। मुझे दो पैसे और मिलने चाहिये। दो।'—रामलाल ने कहा।

हीरासिंह को दो पैसे की परवाह न थी। परन्तु रामलाल ने जब कंजूसी दिखाई तो उसे गुस्सा आ गया।

'अच्छा तो चलो, हम जाकर पास के गाँव में किसी पंचायतदार से फैसला

करवालें। तुम जो कह रहे हो, मुझे ठीक नहीं लग रहा है'—हीरासिंह ने कहा।

दोनों पैदल एक गाँव में पहुँचे। वहाँ एक पंचायतदार से अपना झगड़ा पूरी तरह कह सुनाया।

पंचायतदार ने दोनों की बात बड़े ध्यान से सुनी। रामलाल की ओर देखते हुये उसने कहा—'अगर सच कहा जाय तो केवलसिंह के पाँच आनों में से चार आने हीरासिंह को मिलने चाहिये। तुम्हारे हिस्से में केवल एक आना आता है। इसलिये तुम हीरा-सिंह को एक आना दे दो'।

यह फ़ैसला सुन रामलाल भौचक्का रह गया। उसने सोचा था कि पंचायतदार उसको आधा आना दिलवायेगा। अब उसको एक आना देने के लिये कह रहा है।

'महराज! यह भी क्या न्याय है? रोटियों की संख्या से भी यदि देखा जाय तो मुझे कम से कम दो आने मिलने चाहिये।' कंजूस रामलाल ने कहा।

'हां, मैंने जो फ़ैसला दिया है, वही ठीक है। यह भी बताता हूँ कि यह क्यों ठीक है। पांच रोटियों को तीन में कैसे बाँटोगे'—पंचायतदार ने पूछा।

'अच्छा। एक रोटी के तीन तीन टुकड़े किये। और पन्द्रह टुकड़ों को तीनों में पांच पांच करके बांट दिये।' रामलाल ने कहा।

'तेरी रोटियों के कितने टुकड़े किये गये?'—पंचायतदार ने पूछा।

'जी हुजूर! छे'— रामलाल ने जवाब दिया। 'उनमें से पांच तूने खाये थे, और एक केवलसिंह को दिया था। हीरासिंह की तीन रोटियों के नौ टुकड़े हुये। उनमें से पांच तो उसने खुद खाये और चार केवलसिंह को दे दिये।'

'केवलसिंह ने अपने पांच टुकड़ों के लिये पांच आने दिये। उनमें से सिर्फ़ एक टुकड़ा ही तेरा था, बाकी सब हीरासिंह के थे। इसलिये केवलसिंह के पांच आनों में से हीरासिंह को चार आने मिलते हैं और तुझे एक आना'—पंचायतदार ने यों समझा समझाकर बताया।

रामलाल दो आनों में से एक आना हीरासिंह को दे, अपने लालच को कोसता हुआ चला गया। हीरासिंह भी पंचायतदार की कुशाग्र बुद्धि की प्रशंसा करता हुआ, अपने रास्ते पर चला गया।

सास-बहू की कहानी

एक गाँव में एक विधवा रहा करती थी। जब उसके पति की मृत्यु हुई, तब उसके दो सन्तान थी—बड़ा लड़का और छोटी लड़की।

उसे धौंस जताने में बड़ा मज़ा आता था। फिर उसकी ज़बान भी कोई मीठी न थी। पास पड़ोस में वह चुड़ैल बदनाम थी।

कुछ सालों बाद लड़का बड़ा हुआ। विधवा को इच्छा होने लगी कि घर में जल्दी बहू आये और वह उस पर अधिकार चलाये। परन्तु कौन माँ-बाप अपनी लड़की को उस चुड़ैल की बहू बनायेगा? उसने बहुत कोशिश की, इधर-उधर खोजा। पर कोई भी अपनी लड़की देने के लिए तैयार न हुआ। आखिर उसके रिश्तेदार ने अपनी लड़की देना स्वीकार कर लिया।

लड़की को देखने के लिये विधवा घर से निकली। लड़की उसको जँची भी। उसने सम्बन्ध पक्का कर लिया। बाद में लड़की की माता से बातचीत करते हुए विधवा ने उत्सुकता से पूछा—"क्यों जी! लड़की को कौन सी चीज़ अच्छी लगती है? उसे क्या खाने का शौक है?"

"लड़की को आम का अचार और कच्चे पापड़ खाने का शौक है। अब भी जब कभी मैं पापड़ बेलने बैठती हूँ, तो चुपचाप आ जाती है, और कभी इस तरफ़ से थोड़ी पिसी दाल लेती है, तो थोड़ी उस तरफ़ से। मेरे पापड़ खतम करते करते कम से कम वह दस पापड़ की दाल हज़म कर जाती है।" लड़की की माँ ने प्यार से कहा।

लड़की ने पास खड़े होकर उनकी बातचीत को सुन लिया। वह यह सोच खुश होने लगी कि उसकी सास उसके लिये अचार और पापड़ बनायेगी।

नरेन्द्रकुमार गुप्त

सामने पति से बातचीत करने भी वह घबराती थी। सास को देखते ही बहू का खून सूख-सा जाता। अलावा इसके, उसका पति अपनी माँ के हाथ में कठपुतली-सा था। वह जैसे-तैसे, भाग्य को कोसती हुई, नाना कठिनाइयों को झेलती हुई अपना समय काट रही थी।

इस तरह चार वर्ष गुज़र गये। विधवा की लड़की सयानी हो चुकी थी। वह भी विवाह के लायक हो गई थी। उस लड़की के लिये सौभाग्य से एक जगह वर भी मिल गया था। विवाह के लिये दिन भी निश्चित हो गया था।

एक दिन, शुभ-मुहूर्त में विवाह सम्पन्न हुआ। कुछ दिनों बाद बहू घर में आ गई। सास जितनी चुड़ैल थी, उतनी कंजूस भी थी। बहू के घर आने के बाद वह और उसका लड़का रोज़ अचार लेकर खाया करते। परंतु एक दिन भी भूलकर उसने बहू को अचार नहीं दिया। यही नहीं, वह हमेशा उसको बुरा-भला कहती रहती।

खड़े हो तो गल्ती, बैठो तो गल्ती, अच्छे कपड़े पहिने तो गल्ती, गहने लगाओ तो गल्ती! उसको एक भी त्योहार मनाने की छूट न थी। और तो और सास के

अभी शादी के चार दिन थे। सास ने बहू से हर तरह का काम करवाया। एक क्षण भी साँस न लेने दिया। ज़रूरी अचार बनवाये। पर सास ने स्वयं पापड़ पेलने का और आम का अचार बनाने का निश्चय किया। बहू को वे दोनों अच्छी जो लगती थीं! इसलिये वह चुड़ैल चाहती थी कि बहू उन दोनों का स्वाद तक न देखे। उसने उसी दिन तेल मँगाया, नमक, मिर्च मिलाया। मिर्च के मारे उसके हाथ जल रहे थे, पर वह अपनी ज़िद की

चकी थी। उसने स्वयं अचार बनाया। अगले दिन पापड़ पेलने की ठानी। यह सब बहू देख रही थी।

उस रात को बहू अपने पति से इस प्रकार कह रही थी—"आपकी माँ क्यों इतनी ईर्ष्यालु है! अचार बनाने के लिये मुझसे दुनियाँ भर के काम तो करवा लिया, पर जब अचार की बारी आई तो उसे स्वयं ही बना लिया। मुझे अचार का शौक जो है! कल पापड़ बनायेंगी। मुझे पापड़ के लिये पीसी हुयी दाल बड़ी अच्छी लगती है। हो सकता है, दूसरों के साथ कभी अचार खाने का मिल जायेगा। पर कल पापड़ बन जायेंगे, और मेरे लिये एक टुकड़ा भी न बचेगा। अब क्या किया जाय!"

"मुझे कुछ नहीं मालूम। जो कुछ तू करना चाहती है, कर ले"—पति ने बिगड़ते हुये कहा।

"मुझे एक तरीका सूझ रहा है। मैं वैसे ही करूँगी। जब आपकी माँ ओखल में दाल कूट लेगी, उसे धोने का काम तो मुझे ही दिया जायगा। उसमें तो कम से कम थोड़ा-सा मसाला पिसा रह ही जायगा। उस मसाले को खरोंचकर खा लूँगी। इसके अलावा मसाला मिलने का और कोई उपाय सूझ नहीं रहा है।"—बहू ने कहा।

बाहर बरामदे में खड़े होकर सास ने उन दोनों की बातचीत सुन ली। "अरे, बाप रे बाप! तो यह है इसकी चाल! मैं कोई ऐसी-वैसी बुद्धुक नहीं हूँ।" सोचती सोचती वह रसोई में चली गई। उसी रात पापड़ के लिये मसाला ओखल में कूटकर तैयार कर लिया। "ओखल भी धोये देती हूँ, यह खरोंचकर खायेगी क्या!"—यह सोच वह ओखल धोने गई। परन्तु वह कंजूस थी न! अगर ओखल में लगे मसाले

को उसने ही खरोंच खरोंचकर निकाल लिया, तो एक और पापड़ बन जायगा—उसने सोचा। वह सोच, जब वह ओखल को खरोंच रही थी, मसाला तो मिला नहीं, खरोंचते खरोंचते नाखूनों में बुरी तरह दर्द होने लगी। हाथ जलने लगे। तब सास ने सोचा "इसका तरीका यह नहीं है। इसमें पड़े मसाले का मैं ही चाट लूँगी। उससे मेरा पेट तो भरेगा ही और उसके पेट में कुछ न पहुँच सकेगा"। इस तरीके को अच्छा जान, खुशी खुशी उसने झट अपना मुख ओखल में रख दिया। रखते ही सिर ओखल में फँस गया। निकाले तो न निकले। करे तो क्या करे! चिल्लाना चाहा, पर मुख ओखल के अन्दर था, और बाहर निकल नहीं रहा था। खैर, वह कोसती कोसती वैसी ही पड़ी रही। उसका कराहना कौन सुनता! लड़का और बहू मज़े में सो रहे थे।

सवेरे मेहतरिन आई। वह चिल्लाई—"क्यों माई! यह क्या हो गया है!" वह ओखल के पास गई, जहाँ सास का सिर फँसा हुआ था। यह देख उसने लड़की और बहू को ज़ोर से पुकारा। उन्होंने आकर जब देखा तो वे भी दंग रह गये। उन दोनों ने उसका सिर निकालने की बहुत कोशिश की, पर कुछ फ़ायदा नहीं हुआ। तब मेहतरिन ने सलाह दी—"बाबूजी! ऐसा काम न चलेगा। आप एक बार ठीक माँ की पीठ पर ज़ोर से कूदिये। झटके के साथ इनका सिर आप ही आप बाहर आ पड़ेगा!" लड़का उसकी सलाह के अनुसार माँ पर कूदा। झट सास का सिर बाहर निकल पड़ा।

मुख पर सूजन थी, पीठ में भी सख्त दर्द। विवाह के बाद भी वह चादर ओढ़े पलंग पर पड़ी रहती।

विचित्र शीशा

पुराने ज़माने में एक नवाब था। उसको किसी चीज़ की भी कमी न थी। क्या धन, क्या हाथी, क्या घोड़े, क्या ऊँट, क्या सेना, सभी उसके पास थे। वह मशहूर पराक्रमशाली भी था। उसके धन-न्याय की शोहरत दूर दूर तक पहुँची हुई थी, पर उसको हमेशा एक फ़िक्र सताये रखती।

वह छुटपन में बहुत गरीब था। उसकी एक छोटी सी झोंपड़ी थी। सिवाय माँ के इस दुनिया में उसका कोई न था। वह भूख के मारे मारा मारा फिरता था। पेट भरने के लिये, वह माँ और झोंपड़ी को छोड़ फौज़ में भरती हो गया था।

वह धीमे धीमे सरदार हो गया। फिर सूबेदार, बाद में सेनापति, आखिर नवाब को मारकर वह खुद नवाब बन गया। तब वह गरीबों से खौफ़ खाने लगा। उनको देखते ही झट उसका पारा चढ़ जाता। अगर कोई भीख माँगता देखा जाता, तो उसको मार दिया जाता। यह उसका हुक्म था।

एक दिन नवाब के महल की ड्योढ़ी पर एक फ़क़ीर आया। नवाब को देखने के लिये उसने नवाब के पास खबर पहुँचवाई। नवाब को गुस्सा आया। उसको एक फ़क़ीर की हिमायत अच्छी न लगी।

'उसे अभी तक मारा क्यों नहीं है! वह क्यों जिन्दा छोड़ दिया गया है!'— उसने अपने नौकर से पूछा।

'हुज़ूर! वह भीख माँगने नहीं आया है। वह आपको कुछ चीज़ें बेचना चाहता है'— नौकर ने अदब के साथ काँपते काँपते कहा।

'अच्छा तो उसे अन्दर हाज़िर करो। नवाब ने रोब के साथ कहा। फ़क़ीर कुछ देर बाद अन्दर आया।

शीतल प्रसाद जैन

'क्यों आये हो!' नवाब ने पूछा।

'हुजूर! आपको तो मैंने पहिले ही खबर भेज दी थी। मैं कुछ माल बेचने के लिये आया हूँ।'—फ़क़ीर ने कहा।

'तो तुम अपना माल दिखाओ'—नवाब ने कहा।

'हुजूर! इन सब के सामने दिखाना अच्छा न होगा, चूँकि माल जग....' फ़क़ीर कुछ कहना चहता था, पर कह न पाया।

नवाब ने दरबार खाली करवा दिया। सबको बाहर भेज दिया। फ़क़ीर अपनी झोली में से एक गोली निकालकर कहने लगा—'हुजूर! जो कोई इस गोली को खायेगा, वह दुनिया भर का बादशाह हो जायगा।'

'मैं तो अब भी दुनियाँ का बादशाह हूँ'— नवाब ने जवाब दिया।

फ़क़ीर ने झोली में से एक पुड़िया निकालकर कहा—'हुजूर, जो कोई इसको खायेगा, वह दुनियाँ की सबसे खूबसूरत लड़की से शादी करेगा।'

'इस समय भी मेरी पत्नी दुनियाँ में सबसे ज्यादा खूबसूरत है। मेरी पत्नी से बढ़कर कोई खूबसूरत नहीं है।' नवाब ने कहा।

फ़क़ीर ने इस बार झोली में से एक छोटा-सा शीशा निकालकर कहा—'हुजूर! यह शीशा जिस किसी के चेहरे के सामने रखेंगे, उसके मन की बातों का पता लग जायगा।'

'यह सच है, कैसे यकीन किया जाय!' नवाब ने पूछा।

'यकीन की बात तो छोड़िये, पहिले तो इस शीशे में देखिये तो सही'—फ़क़ीर ने कहा।

'तो इसका दाम बताओ!'—नवाब ने कहा।

'हुजूर! अगर गुस्सा न हो, तो उसका दाम बताता हूँ!'—फ़क़ीर ने कहा।

'कहो! गुस्सा काहे को!' नवाब ने कहा।

'तो इसका दाम आपकी बादशाहत है! अगर आपने इसको लिया तो आपको तख्त खाली करना होगा, और मेरे कपड़े पहिन कर फ़क़ीर बन बाहर जाना होगा!'—फ़क़ीर ने कहा।

नवाब ने कुछ देर सोचा। फिर राज-गद्दी से उतरकर, अपनी पोशाक फ़क़ीर को देकर, फ़क़ीर के कपड़े खुद पहिन उससे शीशा ले लिया।

वज़ीर और सिपहसालार तब बगलवाले कमरे में नवाब के हुक्म की इन्तज़ारी कर रहे थे। नवाब उनके कमरे में गया। वज़ीर वगैरह नवाब को फ़क़ीर के चीथड़ों में पा अचरज़ में पड़ गये। उनको कुछ समझ में न आया।

नवाब ने शीशा लेकर मन्त्री के चेहरे के सामने रखा।

ताज्जुब की बात यह थी कि वज़ीर के मन में नवाब के लिये कोई इज़्ज़त न थी, यद्यपि वह उसके सामने बहुत विनय दिखाया करता था। नवाब को मारकर, खुद नवाब बनने के लिये, वह सिपहसालार से साजिश कर रहा था।

नवाब को उन पर बहुत गुस्सा आया। पर उसने बाहर कुछ ज़ाहिर न किया। लहू की घूँट पीकर वह ज़नाने में गया।

उसकी पत्नी सहेलियों के साथ बैठी हुई थी। नवाब को देखते ही सहेलियाँ उठ कर चली गईं। नवाब ने शीशा ले जाकर बेगम के चेहरे के सामने रखा।

अचरज़ की बात यह कि उसकी बेगम को भी उससे मोहब्बत न थी। इतने दिनों

से वह उसके सामने झूठा-प्रेम दिखा रही थी।

वहाँ से जा, नवाब ने शीशे को अपने लड़कों और रिश्तेदारों के चेहरों के सामने रखा। उनमें से एक भी उससे वाकई प्रेम नहीं करता था।

वह दुनियाँ से ही ऊब उठा। तख्त तो उसने फ़कीर को दे ही दिया था। अब वह फ़कीर बनने के लिये तैयार हो रहा था।

नवाब जङ्गलों में घूमता-फिरता उस गाँव में पहुँचा, जहाँ वह पैदा हुआ था। तब अन्धेरा हो चुका था। अपनी झोंपड़ी खोज-खाजकर वह अन्दर गया।

नवाब की माँ बिस्तर पर मरने को तैयार पड़ी थी। वह धीमे-धीमे कह रही थी—'बेटा....! मेरा प्यारा बेटा........!!'

नवाब ने माँ के पास जाकर शीशा रखा। उसके प्रेम में कोई दोष न था। वह सच्चा था; उसमें कोई स्वार्थ न था। वह निष्कलंक था।

नवाब अब वह व्यक्ति न था, जिसने कभी दुनियाँ का परिपालन किया था। उन सबको छोड़-छाड़कर वह सच्चे प्रेम के लिये तड़प रहा था। वह फ़कीर था। नवाब बच्चों की तरह रो-रोकर पुकारने लगा—'माँ....! माँ..........!!'

नवाब की माँ ने, जो अब और तब मरने को हो रही थी, आँखें खोलीं। उसकी आँखों में मोतियों की तरह दो आँसू थे। आनन्द से उसने आँखें मींच लीं। बस, फिर उसने आँखें न खोलीं। नवाब फिर अपने राज्य को वापिस न गया। फ़कीर की तरह इधर उधर फिरता रहा।

पाटलीपुत्र

दक्षिण देश में पहिले कभी समुद्र के किनारे स्थित विचिन नाम के बन्दरगाहवाले शहर में, कोई भौजिक नाम का गृहस्थी रहा करता था। उसके तीन लड़कियाँ थीं। भौजिक ने उत्तर देश से आये हुये तीन भाइयों से उन तीनों लड़कियों की शादी कर दी। क्योंकि उनका घर आसपास न था, उसने उन तीनों भाइयों को अपने घर में ही रख लिया।

कुछ समय बाद जब बुढ़ापे में, वह गंगा नदी के किनारे तपस्या करने चला गया, तो तीनों भाई घर के मालिक हो गये।

उस देश में भयङ्कर अकाल आया। जीना मुश्किल हो गया। वे तीनों अपनी पत्नियों से कहे बिना ही कहीं गायब हो गये।

उसी समय मंझली पत्नी गर्भवती थी। जब पति घर छोड़कर भाग गये, तो तीनों बहिनें अनाथ हो गईं। आखिर वे अपने पिता के परम प्रिय मित्र यज्ञदत्त के घर नाना कष्टों को सहते हुये अपना जीवन बिताने लगीं।

कुछ दिनों बाद मंझली बहिन ने एक पुत्र को जन्म दिया। इन तीनों बहिनों का वह अकेला ही पुत्र था। इसलिए उसका वे बड़े लाड़-प्यार से लालन-पालन करने लगीं। उसका नाम उन्होंने पुत्रक रखा।

पुत्रक बड़ा हुआ। आजीविका के लिये उसने उत्तर देश जाने की ठानी। जब विन्ध्याचल पर्वत तक पहुँचा, और एक बीहड़ जङ्गल में से जा रहा था, तो उसे दो मनुष्य घमासान हाथापाई करते हुये दिखाई दिये। वे एक दूसरे पर मुक्कों की वर्षा कर रहे थे। वे दोनों लहू-लुहान थे।

'देखने में तो तुम भाई भाई लगते हो। तुम इस बीहड़ जङ्गल में क्यों आये!

कमलारानी पचौरी

क्यों इस तरह लड़ रहे हो!'—पुत्रक ने उनसे पूछा।

तब उन्होंने इस प्रकार जवाब दिया—

'हम मायापुर के लड़के हैं। हमारे पिता की सम्पत्ति—खड़ाऊँ, डंडा और पतीली का, कौन अधिकारी है, यह जानने के लिये हम देख रहे हैं कि हम में से कौन अधिक बलवान है।'

पुत्रक ने हँसकर फिर पूछा—'इस थोड़ी-सी सम्पत्ति के लिये भी भला कोई लड़ता है?'

'यह क्या थोड़ी-सी सम्पत्ति है? इन खड़ाऊओं के पहिनने से आदमी अदृश्य हो जाता है, और आकाश के रास्ते जहाँ चाहे, वहाँ जा सकता है। और यह पतीली जब चाहे तब मन चाहा भोजन देती है। और इस डंडे से जो कोई चित्र ज़मीन पर खींचोगे, वह सजीव हो उठेगा।'—उन्होंने बताया।

'तब तुम्हारा बल निश्चय करने के लिये क्या इस हाथापाई से कोई अच्छा उपाय नहीं है? तुम दोनों भागना शुरू करो। जो तेज़ी से भागेगा, उसी को पिता की सम्पत्ति मिलेगी।'—पुत्रक ने सुझाव पेश किया।

इस उपाय को अच्छा जान, दोनों ने बाजी लगाकर भागना शुरू किया। उसी समय पुत्रक डण्डा, और पतीली लेकर, खड़ाऊँ पहिनकर, अदृश्य होकर, आकाश के रास्ते वहाँ से निकल पड़ा।

जब वह थोड़ी दूर उस तरह गया, तो उसको एक बहुत सुन्दर शहर दिखाई दिया। उस शहर का नाम था आकर्षक। शहर को देखने की इच्छा से वह उस शहर में उतरकर एक बुढ़िया के घर गया।

आकर्षक शहर की राजकुमारी पाटली बहुत ही रूपवती थी। चूँकि ज्योतिषियों

ने कहा था कि वह किसी अजनबी से विवाह करेगी, राजा ने डर के मारे उसको महल के छठी मंजिल में आराम से रख दिया था, और उसका दिन-रात पहारा देने के लिये राज-सैनिकों को नियुक्त कर दिया था।

जब बुढ़िया ने यह बात बताई, तो पुत्रक को उसे देखने की इच्छा हुई। खड़ाऊँ पहिनकर, अदृश्य रूप में वह उसी रात राज महल की छठी मंजिल में राजकुमारी के कमरे में पहुँचा। पाटली का सौन्दर्य देखकर पुत्रक बहुत ही आनन्दित हुआ। कठिन कैद का जीवन अनुभव करती हुई, मुक्ति की प्रतीक्षा करती हुई पाटली को, यह बिना जाने ही कि वह कौन है, वह देवता के समान मालूम पड़ा। उन दोनों ने विवाह करने का निश्चय किया। परन्तु राजा उनका विवाह स्वीकार न करेगा, यह उनको मालूम था। इसलिये पुत्रक ने पाटली को उठाया और खड़ाऊँ पहिनकर आकाश के रास्ते बाहर निकल पड़ा।

सबेरे होते होते वे बहुत दूर चले गये थे। उन्हें भूख लग रही थी। उन्होंने पतीली में से मनचाहा भोजन लेकर अपनी भूख मिटाई। चूँकि पाटली को राज-महल के ऐश्वर्य की आदत थी, वह उस निर्जन वन में न रह सकी। उसकी इच्छा पूरी करने के लिये पुत्रक ने ज़मीन पर डण्डे से एक महानगर का चित्र बनाया। झट वहाँ एक महानगर बन गया।

उस महानगर का पाटली और पुत्रक ने धर्म के अनुसार हमेशा परिपालन किया। वह नगर पुराणों में पाटली-पुत्र नाम से प्रख्यात हुआ। इतिहास में भी वह प्रसिद्ध हुआ। उस महानगर को ही हम आजकल पटना कहते हैं।

आप आकाश में दीखनेवाले "चन्दामामा" के बारे में कुछ समझिए ।

चन्दामामा भूमि के पास आने पर, भूमि से २,२१,६०० मील दूर है। दूर होने पर २,५२,९७० है।

चन्दामामा की परिधि ६,७९५ मील हैं। मध्यरेखा २,१६३, क्षेत्रफल १,४६,६०,००० स्कायर मील, और भार सात लाख अस्सी हज़ार खरोड़ टन है।

भूमि की चारों ओर इसके घूमने का क्षेत्र १५,००,६८० मील है। इस क्षेत्र में चन्दामामा २,२४४ मील प्रति घंटे के हिसाब से, २७ रोज सात घंटे, ४२ मिनट, ११ सेकेण्ड में, अपनी प्रदक्षिणा समाप्त करता है।

पूर्ण चन्द्रमा से सूर्य का प्रकाश ६,१८,००० गुना अधिक है। चन्द्रमा पर पड़े सूर्य के प्रकाश में से हमें केवल १७ फ़ी सदी चान्दनी के रूप में मिल्ती है।

चन्द्रमा में बड़े बड़े गढ़े हैं। उन में से एक बड़ा गढ़ा टोल्मी है। उसकी गहराई ११५ मील है। सब से बड़े गढ़े का नाम थियोफ़िलिस है। उसकी गहराई १९ हज़ार फ़ीट है। चन्दामामा में सब से ऊँचे पहाड़ का नाम लैब्निट्ज़ है। उसकी ऊँचाई २४,९७० फ़ीट है।

भूमि के आकर्षण-शक्ति में से शायद चन्द्रमा में केवल छठा हिस्सा है। जो चीज़ भूमि पर दो मन की होगी, वह चन्द्रमा में १२॥ सेर ही होगी।

भूमि के बजाय चन्द्रमा में तापमान में अधिक तारतम्य रहता है। दिन में २०० डिग्री की गर्मी रहती है, तो रात्री में बरफ़ से भी २०० डिग्री की ठंडक रहती है।

सबसे बड़ी दूरबीन से देखा जाय तो चन्द्रमा २५ मील दूर नज़र आता है।

चन्द्रमा में न पानी है, न हवा, न भिन्न भिन्न प्राणी ही।

भूमि सूर्य की चारों ओर घूमनेवाला ग्रह है और चन्द्रमा भूमि की चारों ओर घूमनेवाला उपग्रह है।

चन्दामामा में खरगोश

पूर्णिमा के दिन हम पूर्ण चन्द्र को देखें तो वह बिल्कुल सफ़ेद नज़र आयेगा। परन्तु उसके बीचों-बीच खरगोश के आकार का एक धब्बा होगा। चन्दामामा में यह खरगोश कैसे आया!

एक समय—यानी बहुत साल पहिले चन्दामामा बिल्कुल सफ़ेद, चान्दी के थाल की तरह हुआ करता था। उस समय भूमि पर, एक जङ्गल में एक खरगोश, एक बन्दर, एक लोमड़ी और एक बिलाव बड़े प्रेम से रहा करते थे। खरगोश हमेशा अपने मित्रों को धर्म आदि के बारे में उपदेश देता, और पशु योनि से मुक्ति पाने के लिये प्रेरित करता रहता। तीनों मित्र खरगोश का तो सम्मान करते थे, परन्तु उसके दिये हुये उपदेशों की परवाह न किया करते थे। क्योंकि बन्दर चंचल मन का था, लोमड़ी चालाक थी, और बिलाव में चोरी की आदत थी।

एक बार कार्तिक पूर्णिमा आई। उस दिन सवेरे खरगोश ने अपने मित्रों को बुलाकर इस प्रकार कहा—'भाइयो! आज कार्तिक पूर्णिमा है। उपवास का दिन है। अगर आज दिन भर उपवास रख, शाम को अतिथियों को भोजन खिलाकर, चन्द्रमा का दर्शन कर यदि हमने भोजन किया तो हमें मुक्ति मिलेगी। मैं वैसा ही करने जा रहा हूँ। मेरी इच्छा है कि आप लोग भी वैसा ही करें।'

बन्दर, लोमड़ी, और बिलाव ने सिर हिलाया और कहा कि वे भी दिन भर उपवास कर, चन्द्रोदय के बाद ही भोजन करेंगे। यह कह वे अपने अपने रास्ते पर चले गये।

श्री कृष्ण खण्डेलवाल

बन्दर ने उपवास करने का निश्चय तो कर लिया था, परन्तु अगले क्षण ही उसे लगने लगा, मानों बेहद भूख उसे सता रही हो। 'अरे बाप रे बाप! मैं इस भूख को भला शाम तक कैसे रोक सकूँगा? अगर जिन्दा रहा, तो अगली कार्तिक पूर्णिमा के दिन उपवास कर लूँगा'—यह सोच बन्दर फलों के पेड़ों की तलाश में इधर उधर घूमने लगा।

लोमड़ी उपवास करने के लिये ऐसी जगह गई, जहाँ शेर घूमा करते थे। चाहे कितनी भी भूख लगे, उसने निश्चय किया कि वह भोजन नहीं छुयेगी। परन्तु कुछ दूर जाने पर उसको एक पेड़ के नीचे आधा खाया हुआ हरिण दिखाई दिया। कोई शेर उसको मारकर, आधा खाकर वहाँ उसको छोड़ गया था। अगर उसने उसको तब छोड़ दिया तो न मालूम, शाम को खाना मिलता है कि नहीं मिलता है। इसलिये लोमड़ी उपवास की बात भूल, उस हरिण पर हाथ साफ़ करने लगी।

बिलाव भी शाम तक सोने के उद्देश्य से एक पेड़ पर चढ़ बैठा। परन्तु पेड़ की शाखा पर उसको एक पक्षी का घोंसला और उसके बच्चे दिखाई दिये। बिलाव उपवास की बात भूल गया। उसने तत्क्षण उन बच्चों को हज़म कर लिया।

चारों मित्रों में से केवल खरगोश ने नियमानुसार सायंकाल तक उपवास किया। सूर्य छुप चुका था और चन्द्रमा निकलने वाला था। खरगोश को बस, एक ही बात सता रही थी। वह यह कि उसे कोई अतिथि दिखाई नहीं दिये थे। अकेले खाने से अच्छा, अतिथि को खिला कर खाना अधिक पुण्यवाला समझा जाता है। इस कारण घर के सामने खड़े हो, खरगोश अतिथियों की बाट जोहने लगा। उसी

समय चन्द्रमा, जो खरगोश की धर्मपरायणता को देख रहा था, मनुष्य-रूप धारणकर खरगोश की परीक्षा करने के लिये आया।

'सबेर से उपवास कर रहा हूँ। इस घने जङ्गल में कोई मुट्ठी भर भोजन देने वाला भी नहीं है। क्या तुम मुझे थोड़ा खाना दे सकोगी? तुम्हारा पुण्य होगा!' चन्दामामा ने खरगोश से पूछा।

'महाराज! हमारे खाने के लिये दूब, पत्ते वगैरह तो यहां खूब हैं; परन्तु आपके लायक भोजन यहाँ कहाँ मिल सकेगा! इसलिये आप मुझे मारकर, अपनी भूख मिटाकर मुझे मुक्ति प्रदान कीजिये!'

'कार्तिक-पूर्णिमा के दिन क्या जीव-हिंसा करना ठीक है! मैं तुम्हें कैसे मारूँ!' चन्दामामा ने पूछा।

'महाराज! आप उसकी फ़िक्र मत कीजिये। आप सूखी लकड़ियाँ लाकर आग बनाइये। मैं उसमें आहुति हो जाऊँगा; उसके बाद मुझे मजे में खा जाइये!'

मनुष्य का रूप धारण किये हुये चन्दामामा ने लकड़ियाँ इकट्ठी कर, वहीं आग बनाई। खरगोश, भगवान का स्मरण कर उस आग में कूदा। परन्तु आश्चर्य यह कि लपटों ने खरगोश को छुआ तक नहीं!

'महाराज! मुझे आग जला नहीं रही है। मैं क्या करूँ! आपकी भूख कैसे मिटेगी!'—खरगोश ने कहा।

झट वहाँ से आग अदृश्य हो गई! चन्दामामा ने अपने चमकीले निज-स्वरूप में प्रत्यक्ष हो, खरगोश को उठा कर कहा—'तेरा जन्म धन्य है। तुझे मैं हमेशा अपने साथ रखूँगा। आओ.... चलो! चलें!!"

तब से खरगोश हमेशा चन्दामामा के साथ रहता है।

रंगीन चित्र-कथा : चित्र - २

★

राक्षसी के शाप के कारण राजा के सिर के स्थान पर गधे का सिर लगा देख दरबार में हलचल मच गई थी। उसी समय अप्सरा ने कहा— "राजा! तुम घबराओ नहीं। असूया के कारण राक्षसी ने यह काम किया है। असूया का जवाब अनुराग है। इसलिये जब तुम एक ऐसी कन्या से, जो तुम्हें प्रेम करती हो, विवाह करोगे, तभी तुम शाप-विमुक्त हो जाओगे।"

तुरंत, राजाज्ञा के अनुसार राज्य भर में ढिंढ़ोरा पीटा गया। ढिंढोरा सुन, देश-देशों से, अच्छी-सी अच्छी सुन्दर कन्यायें आईं। वे सब राजा से विवाह करना चाहती थीं, परन्तु उनको राक्षसी के शाप के बारे में कुछ न मालूम था।

राजा ने उन सुन्दर कन्याओं को देखा। उनके सौन्दर्य की उसने प्रशंसा की, पर क्या फ़ायदा! राजा का सिर देखकर, वे निराश होकर वापिस चली गईं।

शायद उसके खोटे भाग्य में यही लिखा है, यह सोच जब राजा निराश हो, महल में जा ही रहा था कि उसको एक पेड़ के नीचे एक अत्यन्त सुन्दरी दिखाई दी। चूँकि वह गरीब थी, वह और कन्याओं के साथ अन्दर जाने में झिझक गयी थी। इसलिये वह बाहर से ही राजा को बड़े ध्यान से देख रही थी।

यह सब जान, राजा ने झट उससे कहा "तू ही मेरी रानी है!" वह कन्या शरमा गई। मुस्कुराने लगी।

फिर तुरन्त, सेविकाओं ने आकर उसको अच्छे अच्छे कपड़े पहिनाये, बढ़िया गहने पहिना कर सजाया। उनका विवाह बड़े धूमधाम से हुआ।

विवाह होते ही राजा ताड़ गया कि रानी उससे कुछ पूछने के लिये प्रतीक्षा कर रही है। "कल सवेरे तक मुझसे किसी विषय पर भी कोई प्रश्न न पूछना। बाद में तुझे ही सब कुछ मालूम हो जायगा।" राजा ने कहा। उसने कह तो दिया मगर....

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मार्च १९५५ :: पारितोषक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर-संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्न लिखित पते पर भेजनी चाहिए।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास-२६

जनवरी - प्रतियोगिता - फल

जनवरी के फोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गयी हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा!

पहिला फोटो : **मुस्कुराहट क्यों?** दूसरा फोटो : **परछाई देखकर!**

मांगीलाल मोदी, सिरोही (राजस्थान)

समाचार वगैरह

गोण्ड जाति के एक नवयुवक जोहरसिंह का कहना है कि उसने एक ऐसे बाण का आविष्कार किया है, जो दस मील जा सकेगा। उसने अपने गांव में इसका प्रदर्शन भी किया। उसका छोड़ा हुआ बाण चार मील के फ़ासले पर कहीं न मिला। परीक्षणार्थ वह अपने बाण नागपुर भेज रहा है।

* * *

पिछले दिनों दिल्ली में भारतीय विश्व-विद्यालयों के प्रतिनिधियों का एक समारोह हुआ, जिसमें लोक-नृत्य आदि के प्रदर्शन हुये। बिहार का प्रदर्शन सब से अच्छा रहा।

श्री नेहरू चीन का दौराकर भारत वापिस आ गये हैं। वे चीन सरकार के निमन्त्रण पर वहाँ गये थे।

उन्होंने अपने एक वक्तव्य में चीन में क्रान्ति के बाद सम्पन्न कार्य की प्रशंसा की।

चीन और भारत की मैत्री बहुत पुरानी है। श्री नेहरू के इस दौरे से, अनुमान किया जाता है, यह मैत्री और भी घनिष्ट होगी।

* * *

भारत के प्रधान मन्त्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने पिछले दिनों यह घोषित किया कि वे अपनी वर्तमान जिम्मेवारियों से

कुछ समय के लिये विश्राम लेना चाहते हैं। इस समय श्री नेहरू कांग्रेस के अध्यक्ष भी हैं। इसके अतिरिक्त उनके हाथ में और भी कई महत्वपूर्ण कार्य हैं। श्री नेहरू विश्रांति केवल इसलिये ही चाहते हैं कि वे देश की समस्याओं पर अपना ध्यान केन्द्रित कर, अच्छी तरह सोच सकें।

कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने उनकी इच्छा का आदर करते हुये उनको कांग्रेस पद की जिम्मेवारी से फिलहाल मुक्त करने का निश्चय कर लिया है।

* * *

आन्ध्र में, श्री प्रकाशम के मन्त्रि मंडल का पतन हुआ। मन्त्रि मण्डल के विरुद्ध विरोधी पक्ष ने अविश्वास का प्रस्ताव रखा था, जो एक मत से पास भी हो गया। मन्त्रि-मण्डल पर यह दोष लगाया गया था कि उसने मद्य निषेध के बारे में विधान सभा का निश्चय कार्यान्वित नहीं किया है। विधान सभा मद्य-निषेध के विरुद्ध थी। आन्ध्र का निर्माण १९५२, अक्टोबर पहिली तारीख को हुआ था।

* * *

पाण्डीचेरी, जहाँ स्वतन्त्रता के लिये बहुत दिनों तक आन्दोलन चल रहा था, चन्द्रनगर की तरह अब भारत में मिला दिया गया है।

सिवाय पोर्तुगाल के, अब भारत में किसी भी देश का कोई उपनिवेश नहीं है। गोवा, पोर्तुगाल का भारत में उपनिवेश है।

चित्र कथा

वास और दास छुट्टी के दिन घास पर बैठे गप्पें मार रहे थे। 'टाईगर' वहाँ उड़ती तितली से खेल रहा था। 'दास! मैं रुमाल में उस तितली को पकड़ लूँगा। कल स्कूल में सब को दिखायेंगे!' यह कह वास उठा।

तितली के साथ साथ, शोर करता वास भी उछलता-कूदता रहा। उसे ऐसा लगता कि वह हाथ में आई, फिर यकायक गायब हो जाती! वास ने सोचा कुछ भी हो, उसे पकड़ना है। वह ज़ोर से कूदा और पानी से भरे गढ़े में जा पड़ा! तितली उड़ गई !!

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26, and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by P. S. Khambata

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

परछाई देखकर !

प्रेषक
मांगीलाल मोदी, सिरोही.

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र - २